१५८
कहानी

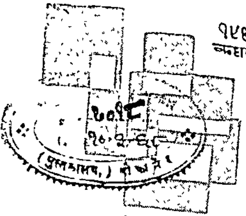

७०१८
१०-२-६८
(पुस्तकालय,)

प्यास

आत्मा की प्यास मनुष्य-जीवन का सबसे बड़ा अभिशाप है; और यदि कलम कृश्न चन्दर ऐसे कलाकार के हाथ में हो, तो इस अभिशाप के चित्रण में आत्मा की सारी परतें उघड़ जाएंगी।

एक प्यासी आत्मा की जीती-जागती तसवीर आपको इस लघु उपन्यास में मिलेगी। इसके अतिरिक्त पुस्तक में कृश्न चन्दर की चार श्रेष्ठ कहानियों का अपना अतिरिक्त आकर्षण है।

पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२

© कृश्न चन्दर

चौथा संस्करण

PYAS : By Krishan Chandar
NOVELETTE
एक

प्यास

और

चार श्रेष्ठ कहानियां

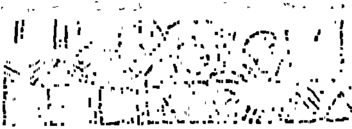

प्यास

नवाब बड़ा छरेरा और ज़नखा-सा लौंडा था जो ज़रीना को इसलिए पसन्द था कि वह ज़रीना के हाथ से पिटकर भी रो-धोकर सब्र कर लेता था और दूसरे नौकरों की तरह बोरिया-बिस्तर बांधकर रुख़सत नहीं हो जाता था।

उसके गन्दुमी रंग के चेहरे पर चेचक के दाग थे और बहुत दुबला था और बहुत खाता था और समझ में नहीं आता कि जो वह खाता है वह कहां जाता है। उसकी आवाज़ में एक हल्की-सी तुतलाहट थी और जब वह खड़ा होता था, तो कभी सीधा खड़ा नहीं हो सकता था; आकर दीवार या किसी दरवाज़े से लगकर नीमदराज़ हालत में यों खड़ा होता था कि पांव फ़र्श पर घिसट रहे हैं, सिर बाईं तरफ़ को लटका हुआ है, एक हाथ माथे पर है, तो दूसरे से पीठ खुजा रहा है। नवाब को औरतों की तरह हाथ हिला-हिलाकर बातें करने का बहुत शौक था। उन्हींकी तरह वह वाक्यों को चबाके या चपटा करके या रबड़ की तरह खींच-खींचकर बोलता था। मगर बाहर के कामों में बहुत होशियार था इसलिए अपने तमाम हास्यास्पद हाव-भावों और नाज़-नख़रों के बावजूद काबिले-बरदाश्त था।

घर का बावर्ची तीन दिन से गायब था और नवाब को किचिन में काम करना पड़ रहा था। हालांकि उसे सिर्फ़ ऊपर के काम के लिए रखा गया था, मगर ज़रीना लड़कियों के कालेज में पढ़ाने जाती थी,

मैं अपने दफ्तर जाता था, इसलिए नवाब खाना न पकाए तो कौन पकाए ? और इससे कठिन समस्या यह थी कि बावर्ची कौन ढूंढे और कब ? यहां किसीको फुरसत ही न मिलती थी।

नवाब को जब तीन दिन तक बैंगन बघारने पड़े और लहसुन की चटनी पीसकर सारा मसाले का कारखाना तैयार करना पड़ा, तो उसकी सारी तुनकलाहट और रौनक नष्ट हो गई। मर्दों की तरह बड़े करख्त और रूखे स्वर-भरे स्वर में बोल उठा—"साहब, हमसे नहीं होता। हमको एक दिन की छुट्टी दो। हम आपके लिए एक बावर्ची ढूंढ के लाएगा।"

"कोई बावर्ची है तुम्हारी नजर में ?" ज़रीना ने उसकी झुंझलाहट पर मुस्कराकर पूछा।

किचिन से बाहर आकर नवाब को जो ठंडी-ठंडी हवा के झोंके लगे, तो उसके मिजाज की रंगीनी फिर उभरने लगी। उसपर उसे घर की मालकिन की मुस्कराहट जो मिली, तो और भी फैल गए। आपने एक कन्धा ऊपर उचकाया, दूसरा नीचे किया, बायें कूल्हे को अन्दर की तरफ झुकाया, दायें वाले को ज़रा-सा बाहर निकाला और अपने दोनों हाथ बड़ी अदा से मलते हुए बोले, "अब लाएंगे कहीं न कहीं से आपके लिए।" नवाब ने अपने दीदे घुमाते हुए बावर्ची की समस्या को एक रहस्यपूर्ण राजनीतिक भेद की तरह हमारे सामने कुछ इस तरह पेश किया कि जी जलके कबाब हो गया। जी चाहा—साले को दूं दो झापड़ और उसकी सारी इतराहट निकाल दूं। मगर ज़रूरत बावर्ची की थी और बावर्ची ढूढ़ने की फुर्सत न मुझे थी न ज़रीना को। इसलिए नवाब को एक दिन की छुट्टी देनी पड़ी।

एक दिन के बाद इतवार था। मैं अपने कमरे में बेज़ार बैठा हुआ मलगजी सुबह की मैली-मैली रोशनी में अपना सिर खुद ही हौले-हौले दबा रहा था। कभी-कभी मुझे अपना सिर टूथपेस्ट की

की तरह मालूम होता है, जब तक दबाओ नहीं कुछ निकलता
-नी।

इतने में क्या देखता हूँ कि नवाब दोनों हाथों से दरवाजे की पट्टी
ने, गर्दन एक तरफ को लटकाए, अधखुली आंखों से मुझे देख
।

"ही-ही!" वे मुस्कराकर बोले, "हम बावर्ची ले आए।"
'किधर है?"

नवाब सहमकर जरा-से सीधे हुए। अपने दोनों बाजू दरवाजे
ट्टी से उतारकर अपनी कमर पर रख लिए। फिर जरा पीछे
और किसीको रास्ता देकर बोले, "अन्दर चले आओ।"

। दुबला पतला, कंजी आंखों वाला एक आदमी अन्दर
। उम्र कोई पैंतीस बरस की होगी। छोटे-छोटे काले-काले होंठ,
छोटी कंजी आंखें, तंग माथा, बाल उलझे हुए, गाल अन्दर
ए, दांतों की रेखों में पान का भूरा मैल भरा हुआ, ठोड़ी के
र ठोड़ी पर कहीं-कहीं बाल रह गए थे। अजब घिन-सी महसूस
हुई।

'तुम बावर्ची हो?" मैंने पूछा।
जी!"

'क्या नाम है तुम्हारा?"
'ओमप्रकाश!"

ने उसे सिर से पैर तक देखा। फिर नवाब से कहा, "इसे
साहब के पास ... ले। वे देख लें और चाहें तो रख लें।"

'पहर के ... ी कोरमा था और शिमला-मिर्च
... थे। मटरपुलाव और रायता
... और दूधी हलुआ। हर चीज

मैं अपने दफ्तर जाता था, इसलिए नवाब खाना न पकाए तो कौन पकाए? और इससे कठिन समस्या यह थी कि बावर्ची कौन ढूंढे और कब? यहां किसी को फुरसत ही न मिलती थी।

नवाब को जब तीन दिन तक बैंगन बघारने पड़े और लहसुन की चटनी पीसकर गर्म मसाले का कोरमा तैयार करना पड़ा, तो उसकी सारी तुतलाहट और स्त्रैणता खत्म हो गई। मर्दों की तरह बड़े कड़क और झुंझलाहट-भरे लहजे में बोल पड़ा—"साहब, हमसे नहीं होता। हमको एक दिन की छुट्टी दो। हम आपके लिए एक बावर्ची ढूंढ के लाएगा।"

"कोई बावर्ची है तुम्हारी नजर में?" जरीना ने उसकी झुंझलाहट पर मुस्कराकर पूछा।

किचिन से बाहर आकर नवाब को जो ठंडी-ठंडी हवा के झोंके लगे, तो उसके मिजाज की स्त्रैणता फिर उभरने लगी। उसपर उसे घर की मालकिन की मुस्कराहट जो मिली, तो और भी फैल गए। आपने एक कन्धा ऊपर उचकाया, दूसरा नीचे किया, बायें कूल्हे को अन्दर की तरफ झुकाया, दायें वाले को जरा-सा बाहर निकाला और अपने दोनों हाथ बड़ी अदा से मलते हुए बोले, "अब लाएंगे कहीं न कहीं से आपके लिए।" नवाब ने अपने दीदे घुमाते हुए बावर्ची की समस्या को एक रहस्यपूर्ण राजनीतिक भेद की तरह हमारे सामने कुछ इस तरह पेश किया कि जी जलके कबाब हो गया। जी चाहा—साले को दूं दो झापड़ और उसकी सारी इतराहट निकाल दूं। मगर जरूरत बावर्ची की थी और बावर्ची ढूंढ़ने की फुर्सत न मुझे थी न जरीना को। इसलिए नवाब को एक दिन की छुट्टी देनी पड़ी।

एक दिन के बाद इतवार था। मैं अपने कमरे में बेजार बैठा हुआ मलगजी सुबह की मैली-मैली रोशनी में अपना सिर खुद ही हौले-हौले दबा रहा था। कभी-कभी मुझे अपना सिर टूथपेस्ट की

ट्यूब की तरह मालूम होता है; जब तक दबाओ नहीं कुछ निकलता ही नहीं।

इतने में क्या देखता हूं कि नवाब दोनों हाथों से दरवाज़े की पट्टी को थामे, गर्दन एक तरफ को लटकाए, अधखुली आंखों से मुझे देख रहे हैं।

"जी-जी!" वे मुस्कराकर बोले, "हम बावर्ची ले आए।"

"किधर है?"

नवाब सहमकर ज़रा-से सीधे हुए। अपने दोनों हाथ दरवाज़े की पट्टी से उतारकर अपनी कमर पर रख लिए। फिर ज़रा पीछे हटकर और किसी को रास्ता देकर बोले, "अन्दर चले आओ।"

काला दुबला पतला, कंजी आंखों वाला एक आदमी अन्दर आया। उम्र कोई पैंतीस बरस की होगी। छोटे-छोटे काले-काले होंठ, छोटी-छोटी कंजी आंखें, तंग माथा, बाल उलझे हुए, गाल अन्दर धंसे हुए, दांतों की रेखों में पान का चूरा मैल भरा हुआ, शेव के बावजूद ठोड़ी पर कहीं-कहीं बाल रह गए थे। अजब घिन-सी महसूस हुई।

"तुम बावर्ची हो?" मैंने पूछा।

"जी!"

"क्या नाम है तुम्हारा?"

"ओमप्रकाश!"

मैंने उसे सिर से पैर तक देखा। फिर नवाब से कहा, "इसे बेगम साहब के पास ले जाओ। वे देख लें और चाहें तो रख लें।"

दोपहर के खाने में शाहजहांनी कोरमा था और शिमला-मिर्च में भरा हुआ कीमा था और दम के आलू थे। मटरपुलाव और रायता और दो तरह का मीठा—शाही टुकड़े और सूजी हलवा। हर चाव

उम्दा और नफीस थी—[illegible]।

मैंने खुश होकर कहा, "ओमप्रकाश, खाना तो तुम ठीक पका लेते हो।"

"ओमप्रकाश?" जमीला मेरी तरफ हैरत से देखकर बोली, "मगर इनका नाम तो इश्तियाक है?"

मैंने बावर्ची की तरफ देखा जो एक कोने में अपने दोनों हाथ अपनी नाफ पर रखे खड़ा था और मुझे देखने के बजाय जमीन को देख रहा था।

"क्यों बे? तुमने मुझे अपना नाम गलत क्यों बताया?" मैंने बावर्ची से पूछा।

बोला, "साहब, जब मैं आपके कमरे में आया और आपको देखा, तो ऐसा लगा कि शायद आप हिन्दू हैं, तो मैंने आपको अपना नाम ओमप्रकाश बताया। फिर मैं बेगम साहब के कमरे में गया, तो मुझे ऐसा लगा जैसे ये मुसलमान हैं, तो मैंने उनको अपना नाम इश्तियाक बता दिया।"

"मगर बेवकूफ! तुम एक कमरे में ओमप्रकाश और दूसरे कमरे में इश्तियाक कैसे हो सकते हो?"

"दिल्ली में ऐसा करना पड़ता है, साहब! एक घर में ओमप्रकाश, तो दूसरे घर में इश्तियाक बताना पड़ता है—पेट रोटी मांगता है, साहब!" उसने किसी कदर शिकायत के लहजे में कहा और उसके लहजे से यह भी मालूम होता था जैसे उसे शिकायत इसकी नहीं है कि उसे अपना नाम गलत क्यों बताना पड़ा, बल्कि इस बात की है कि पेट रोटी क्यों मांगता है!

गर्मियों के दिन थे। दोपहर में जब उमस बढ़ने लगी, तो मैं दोबारा नहाने के लिए बाथरूम में घुसा। टोंटी घुमाकर

मालूम किया कि शावर खराब हो चुका है। नवाब को आवाज़ दी तो मालूम हुआ कि वह अपने तलवों मे तेल चुपड रहा है। इश्तियाक भागा-भागा आया। मैंने उससे कहा, "चौक में जाकर मुनी-सिंह प्लम्बर को बुला लाओ, शावर खराब है।"

"मैं ठीक किए देता हू।" इश्तियाक बोला।

"तुम?"

वह सिर झुकाकर बड़ी आजिज़ी से बोला, "जी, मैं प्लम्बिंग का काम भी जानता हू।"

पाच मिनट में उसने शावर ठीक कर दिया।

शाम को बिजली का पैडस्टिल पखा, जो सहन मे चलता था, खराब हो गया। ज़रीना ने नवाब को आवाज़ दी, तो मालूम हुआ कि वह अभी दोपहर की नीद से फारिग नही हुआ है। लिहाज़ा इश्तियाक को बुलाया गया और उससे कहा गया कि वह चौक मे पखे वाले के पास चला जाए और अपने सामने पंखा दुरुस्त कराके लाए। बहुत गर्मी है आज तो, रात-भर सहन में पखा चलेगा।

इश्तियाक ने बड़ी बारीकी से पखे का मुआयना किया। मुआयना करने के बाद उसने अपने दोनों बाजू अपनी नाफ पर रख लिए, बोला, "हुज़ूर, मैं यह पखा ठीक कर सकता हूं।"

"क्या तुम पखे का काम भी जानते हो?" मैंने उससे पूछा।

सिर झुकाके बोला, "जी! बिजली का काम भी जानता हूं। पंखा फिट कर लेता हूं। अभी करके दिखा देता हूं।"

डेढ़ घण्टे में पैडस्टिल फैन फर-फर चलने लगा। मैंने इश्तियाक को नई नज़रों से देखा। वह कुछ शर्माया कुछ मुस्कराया। आखिर में कुछ सिकुड़कर, कुछ सिमटकर, कुछ दुबककर किचिन में चला गया।

त के खाने मे रामपुरी चिकन था। चिकन काटो तो अन्दर

बिरयानी मिलती है। बिरयानी पुलाओं के अन्दर रंगीन भात नज़र आती है। रंगीन भात के अन्दर अण्डों का मालीदा मिलता है बादाम और किशमिश के साथ। अजीब भूलभुलैयां किस्म की डिश थी, मगर मुख्तसर और मज़ेदार।

मैंने एक लम्बा सलाम किया, तो झुककर सात बार कोर्निश बजा लाए, बोले :

"आपने किया है सलाम,
यह है बन्दे पर इकराम।"

"अरे !" मेरे मुंह से निकला।

"जी हां।" सिर झुकाकर बोले, "मैं शायर भी हूं। मेरा तख़ल्लुस 'शहनाई' है !"

मेरी तबियत शायरी मे बहुत उलझती है। सुना है हर वक्त पान खाते रहते हैं और शेर उगलते रहते हैं। पहले जी चाहा आज ही जवाब दे दूं। फिर अगले बीस रोज में मालूम हुआ कि हजरत बीस-बाईस किस्म के दूसरे पेशे भी जानते हैं—कुर्सियां बुन लेते हैं, मोढ़े ठीक कर लेते हैं। लकड़ी का टूटा-फूटा सामान दुरुस्त कर लेते हैं, क्योंकि बढ़ई का काम भी सीखा है। सिनेमा के गेटकीपर भी रह चुके हैं। गंडेरियां बेची हैं। पनवाड़ी के यहां काम किया है। ठेला खींचा है। खिलौनों की फैक्टरी मे काम किया है। हज्जाम ये रह चुके हैं। सिलाई से लेकर कपड़ो की धुलाई तक के सब मरहलों को ये पेशेवरों की हैसियत से परख चुके हैं। बडे उम्दा मालिशिये हैं। सिर की चम्पी के उस्ताद हैं। कनमैलिये भी हैं। चाट बनाना जानते हैं। और सबसे बड़ी बात यह कि बहुत ही कम खुराक है। जरीना को उनकी यह आदत बहुत भाई, क्योंकि वह नवाब की आदत से आजिज रहती थी। इसलिए उसने धीरे-धीरे घर का सारा काम इश्तियाक को सौंप दिया।

दो माह मे इश्तियाक का सिक्का सारे घर पर जम गया। इस तरह भाग-भाग के वह काम करता था कि नवाब और भी काहिल और निकम्मा होता गया; और मैंने देखा कि इश्तियाक भी यही कुछ चाहता है। उम्र मे नवाब इश्तियाक से सत्तरह-अठारह बरस

छोटा होगा मगर थोड़े ही अरसे में नवाब इश्तियाक से ऐसा सलूक करने लगा जैसे वह मालिक हो और इश्तियाक उसका गुलाम हो। पहले तो मैंने यह समझा कि यह सब कुछ एहसानमंदी के जज्बे में हो रहा है। बाद में ख्याल आया—मुमकिन है इश्तियाक नवाब पर आशिक हो गया हो। हालांकि नवाब पर आशिक होना बड़े दिल-गुर्दे का काम है। उसके लिए जरूरी है कि आशिक की आंखों की बीनाई बेहद कमजोर हो। सुनने की ताकत तकरीबन न हो और कोई कोमल भावना दिल में न हो। बाद में मालूम हुआ कि मेरा यह ख्याल भी सही न था। इश्तियाक नवाब को अपने पर एहसान करने वाला समझता था, न उसपर फिदा था। बस उसे दूसरों को खिलाने का मर्ज था और वह दूसरों को खिला-पिलाके दिल में एक अजीब-सी खुशी महसूस करता था। चूंकि वह खुद कम खाता था इसलिए वह अपने हिस्से की खूराक भी नवाब को दे देता। हमारे बाद उसके लिए सालन का बेहतरीन हिस्सा अलग रख देता। पहले उसे खिलाता, बाद में खुद खाता। हौले-हौले नवाब ने काम में दिलचस्पी लेना बिल्कुल खत्म कर दिया। किसी बड़ी बी की तरह एक खटिया पर पड़ा कराहता रहता। और मैंने देखा कि इश्तियाक को इसकी फर्जी बीमारी को बढ़ा-चढ़ाके बयान करने में बड़ा मजा आता। वह उसे खटिया पर पूरा आराम करने का मशवरा देता। उसके लिए बाजार से दवा लाता और, फल, सिगरेट, बीड़ी के पैसे भी खुद देता। कभी-कभी एकाध बुश्शर्ट और पाजामा या पतलून भी सिला देता। हौले-हौले इश्तियाक की तनख्वाह का बेशतर हिस्सा नवाब पर खर्च होने लगा और नवाब अपनी तन-ख्वाह की कुल रकम बचा के अपनी मां को अलीगढ़ भेजने लगा।

जरीना ने कई बार इश्तियाक को समझाया। उसने अपनी तन-ख्वाह जमा करने के फायदे समझाए। मगर इश्तियाक पर उसके

समझाने-बुझाने का कोई असर न हुआ। मुस्कराकर बोला, "बेगम साहब ! बच्चा है, खा लेता है तो क्या करता है !"

"अरे, मगर तू अपने लिए भी तो कुछ कर ले कम्बख्त !" जरीना चिढ़कर उससे कहती, "दूसरों के लिए क्यों मरता है ?"

"मेरा आगे-पीछे कौन है बेगम साहब ?" इश्तियाक गर्दन झुकाकर जवाब देता, "भाई नहीं, बहन नहीं, मा नहीं, बाप नहीं— सब भरतपुर के दंगों में मारे गए। मेरा सीना हर वक्त खाली-खाली-सा रहता है।"

कुछ दिनों के बाद नवाब की मां का खत अलीगढ़ से आया। उसने नवाब के लिए एक लड़की ठीक कर ली थी। दो माह बाद शादी थी। मा उसे वापस बुला रही थी। गफूरा साइकल वाला, जिसके यहां दिल्ली आने से पहले नवाब काम करता था, वह अब फिर उसे काम देने के लिए तैयार था। इसलिए नवाब वापस अलीगढ़ जाने के लिए तैयार हो गया। हम भी अन्दर से बहुत खुश थे क्योंकि नवाब अब करीब-करीब मुफ्त की खाता था, वर्ना सारा काम तो इश्तियाक ने संभाल लिया था। जरीना ने भी तय कर लिया था कि नवाब के जाने के बाद वह ऊपर के काम के लिए किसीको न रखेगी। इश्तियाक की मौजूदगी में किसी दूसरे नौकर की जरूरत न थी।

जरीना बोली, "देख, नवाब की शादी हो रही है। अब तू भी शादी कर ले, इश्तियाक। मैं तेरी बीवी को रख लूंगी। मुझे एक नौकरानी की जरूरत है।"

शादी के नाम पर मैंने देखा कि इश्तियाक कुछ चिढ़-सा गया है। उसकी भंवें तन गईं। तंग माथे पर बालों की लटें डोलने लगीं और उसके छोटे-से होंठ फड़कने लगे। मगर वह कुछ बोला नहीं, सिर झुकाकर खाने के कमरे से बाहर निकल गया।

उसके जाने के बाद नवाब के चेहरे पर एक अजीब-सी मुस्कराहट आई। खाने की मेज के करीब आकर बड़ी राजदारी से बोला, "अरे साहब! यह शादी क्या करेगा! इसकी बीवी तो शादी के दूसरे दिन ही इसे छोड़कर भाग गई थी।"

"क्यों?" जरीना ने पूछा।

"मालूम नहीं, बेगम साहब," नवाब बोला, "यह कुछ बताता तो है नहीं।"

चन्द मिनट के बाद जब हम लोग खाना खाके सहन में हाथ धोने के लिए आए तो देखा कि इश्तियाक किचिन में मैले बर्तन और राख का ढेर अपने सामने रखे शून्य में घूर रहा है और उसकी छोटी-छोटी आंखें किसी ना-मालूम जज्बे से भीगकर तारों-सी चमक रही हैं।

मुझे पहली बार इश्तियाक में दिलचस्पी महसूस हुई।

३

आठ-दस रोज के बाद नवाब ने अलीगढ़ वापस जाने का प्रोग्राम बना लिया। उसके जाने पर इश्तियाक चुपके-चुपके बहुत रोया। उसकी आँखें सुर्ख थीं और होंठों के कोये बेतरह फड़कते थे। मगर जबान से उसने कुछ नहीं कहा। उसने नवाब के लिए सफरी नाश्ता तैयार किया। हालांकि सिर्फ ढाई घंटे का सफर था, मगर कीमे के पराठे और सुर्ख मिर्चों का अचार और आलू का भुरता और बेसनी रोटी और मक्खन की एक गोली। वह नवाब की भूख से वाकिफ था। खुद अपने खर्च से उसने नवाब के लिए नाश्ता तैयार किया था। इसलिए हम शिकायत भी नहीं कर सकते थे। वह खुद नवाब के लिए स्कूटर लेके आया। उसका सामान स्कूटर में रखा और उसे पुरानी दिल्ली के स्टेशन पर गाड़ी में सवार कराके वापस आया।

दो दिन तक इस तरह उद्विग्न और बेचैन फिरता रहा जैसे उसका घर लुट गया हो और वह किसी उजाड़ वीराने में घूम रहा हो। खाने का स्तर एकदम गिर गया था। कोरमा उसके जज्बे की तरह तल्ख था और दलिया इतना पतला जैसे किसीने उसकी सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया हो। चपातियां बेडौल और बेढंगी और उनपर जगह-जगह मायूसी की राख लगी हुई।

दो दिन तक तो हमने किसी न किसी तरह सब्र करके खाना जहरमार किया और यह सोच लिया कि अगर मामला योंही चलता

रहा, तो इश्तियाक को जवाब देना पड़ेगा।

मगर दो दिन बाद इश्तियाक संभल गया। कहीं से वह एक बिल्ली का बच्चा उठा लाया। और अब वह बिल्ली का बच्चा इश्तियाक की तवज्जह का मरकज़ बन गया। घर का काम करने के बाद वह अपना सारा वक्त, जो उससे पहले वह नवाब को देता था, इस बिल्ली के बच्चे पर खर्च करने लगा; और अपनी तनख्वाह का काफी हिस्सा बिल्ली के बच्चे के लिए दूध और गोश्त पर खर्च करने लगा। और यों देखा जाए, तो बिल्ली का बच्चा नवाब से कुछ कम नहीं खाता था। उसके नाज और नखरे भी नवाब से कम न थे। वह उतना ही इतरैला था और वैसी ही अदाएं दिखाता था। दो ही दिन में इश्तियाक संभल गया और खाने का स्तर भी ठीक होते-होते फिर अपनी पहली और असली हालत पर आ गया और हम लोगों ने चैन का सांस लिया।

इश्तियाक किसी काम को ना नहीं करता था क्योंकि वह अपनी दानिस्त में सब कुछ जानता था। यह किसी शेखीखोरे की आदत न थी—इस कदर, जिस कदर यह एहसास कि मुझे यह काम भी करके दिखा देना चाहिए। उसे अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा का बहुत ख्याल था; और कोई एक अजीब-सी लगन थी उसके दिल में जो उसे हर काम को पूरा करने को उकसाती थी। चाहे वह उसे जानता हो या न जानता हो। कई दिनों से रेडियो खराब था। और मैं चूंकि रेडियो का काम अच्छी तरह जानता हूं, इसलिए ज़रीना ने मुझे कई बार रेडियो ठीक करने को कहा। मगर दफ्तर की लम्बी झक-झक के बाद जहन और जिस्म दोनों इस कदर थक जाते हैं कि रेडियो को खोलने और ठीक करने की हिम्मत कहां से लाएं। इसलिए मैं इस काम को आज और कल पर टाल रहा था।

एक दिन दफ्तर से जो आया, तो देखा कि ड्राइंगरूम के एक

ने में पूरा रेडियो खुला पड़ा है और इश्तियाक अजीब घबराई हुई लत में उसे ठीक करने की कोशिश कर रहा है और ज़रीना करीब ड़ी रूखी-सी हो रही है। मैंने आंखों के इशारे ही इशारे में पूछा क्या बात है ?

ज़रीना बोली, "इश्तियाक ने कहा था, मैं रेडियो भी ठीक कर देता हूं। तुम्हें कई दिन से फ़ुरसत नहीं मिल रही है, इसलिए मैंने इश्तियाक को इस काम पर लगा दिया। दो ढाई घण्टे से रेडियो पर काम कर रहे हैं, हालांकि तुमने बताया था कि कोई मामूली-सा नुक्स है।"

मैं मामले की नज़ाकत समझ गया। इश्तियाक अपने छोटे-से माथे पर बाल गिराए, मुझसे आंखें चुराए रेडियो पर काम कर रहा था। साफ़ मालूम होता था कि रेडियो खोल तो लिया है मगर अब जोड़ना नहीं आता। चेहरे से पसीना फूट निकला था।

मैंने ज़रीना को बाहर भेज दिया और खुद इश्तियाक के साथ काम करने में जुट गया। मगर मैंने इश्तियाक को भी महसूस नहीं होने दिया कि मुझे मालूम है कि उसे यह काम नहीं आता। बल्कि मैंने इस तरीके पर काम को आगे बढ़ाया जैसे हर काम इश्तियाक की मर्ज़ी ही से हो रहा है।

घण्टे-भर में रेडियो ठीक हो गया। ज़रीना बहुत खुश हुई। उसने इश्तियाक को दो रुपये इनाम दिए। मगर चन्द दिनों के बाद फिर इश्तियाक की शामत आई। ज़रीना ने कहीं उससे पूछ लिया, "क्या तुम रसगुल्ले बना सकते हो ?"

"जी हां।" इश्तियाक फ़ौरन बोला।

"एक दिन बनाके दिखाओ।"

"आज ही रात को बनाऊंगा।"

रात के खाने के बाद देर तक इश्तियाक किचिन में कुछ खटर-

पटर करता रहा। अंगीठी से देर तक धुआं सुलगता रहा। मुंह में बीड़ी जलती रही। कोई एक बजे के करीब किचिन की बत्ती बुझी और इश्तियाक ने दूसरे दिन सुबह नाश्ते पर बर्फ में ठण्डे रसगुल्ले ताजे और उम्दा और गुलाब की खुशबू से महकते हुए पेश किए।

"ये रसगुल्ले तुमने बनाए हैं?" ज़रीना ने हैरत से पूछा।

"जी, इसी खाकसार ने।" इश्तियाक दरवाजे से लगकर, नजरें झुकाकर, पांव से फर्श को कुरेदने की कोशिश करते हुए बोला।

"बिलकुल बाजार के से मालूम होते हैं।" ज़रीना तारीफ करते हुए बोली।

"यही तो इनकी खूबी है," मैंने कहा, "सीधे बाजार से लाए हैं।"

"जी नहीं।" इश्तियाक ने जोर से प्रतिवाद किया।

उसके प्रतिवाद की शिद्दत देखकर ज़रीना का शुबा और बढ़ गया। बोली, "तो आज रात को मेरे सामने रसगुल्ले बनाना। मैं खुद देखूंगी।"

"जी, बहुत अच्छा।"

इश्तियाक ने रसगुल्लों के सिलसिले में चन्द चीजों की फहरिस्त पेश की जो मंजूर कर दी गई। दोपहर में बहुत देर तक इश्तियाक बाज़ार में रहा। सरेशाम ज़रीना ने उसके झोले की तलाशी ले ली कि कहीं वह रसगुल्ले बाज़ार से न ले आया हो। रात के खाने के बाद इश्तियाक ने बड़े ठाटबाट से रसगुल्ले बनाने का कारोबार किचिन में फैला दिया। ज़रीना ने घर को अन्दर से बन्द करके ताला लगा दिया था और हर पन्द्रह-बीस मिनट के बाद किचिन में खुद झांक लेती थी। और कोई दो बजे के करीब जब नींद का गलबा शदीद होने लगा तो रसगुल्ले तैयार हो गए। इश्तियाक एक प्लेट में रसगुल्ले लेकर आया। खांड के शीरे में फिनायल की गोलियों से भी दो-तिहाई

कम बड़ी सफ़ेद-सफ़ेद गोलियां सी तैर रही थीं। जरीना चीखी—"अरे, ये रसगुल्ले हैं? बकरी की मींगनी के बराबर?"

"अभी छोटे हैं। देखिए, समझिए बेगम साहब, ये रसगुल्ले अभी छोटे हैं, *मगर रात-भर शीरा पीएंगे सुबह को फूलकर पूरा* रसगुल्ला हो जाएंगे।" इश्तियाक ने समझाया।

जरीना को यकीन आया न मुझे। मगर नींद का गलबा शदीद था इसलिए हम सो गए। सुबह उठे, तो नाश्ते पर पूरी गोलाई के सफ़ेद-सफ़ेद रसगुल्ले खाने को मिले। किसी तरह यकीन न आता था कि रात के कुनन की गोलियों के बराबर रसगुल्ले फूलकर इस कदर बड़े हो गए थे। मगर रात-भर कौन जागे? और कौन चौकीदारी करे? इश्तियाक जरूर सुबह बाज़ार से रसगुल्ले खरीद लाया होगा और रात की गोलियों को उसने नाली में बहा दिया होगा। मगर अब क्या हो सकता है! जो शख्स अपनी निज की प्रतिष्ठा की खातिर रात-भर जाग सकता है और अपनी जेब से पैसे खर्च करके दूसरों को रसगुल्ले खिला सकता है, महज़ अपनी ज़ात की अहमियत जताने के लिए, उससे उलझना बेकार है।

४

ज्यों-ज्यों बिल्ली का बच्चा बड़ा होता गया, उसके प्रति इश्तियाक का ममत्व बढ़ता गया। चन्द माह में हमारे सामने एक खूबसूरत बिल्ली सहन में घूम रही थी जिसके बाल मक्खन की तरह मुलायम थे, जो बेहद मीठी सरगोशी में खुरखुर करती थी। और जब वह गर्दन न्योहड़ाके, आंखें झपकाके इश्तियाक की तरफ देखती थी, तो यह बेचारा दिल थामके रह जाता था। थी भी कयामत की हर्राफा: मोटी गुल-गलोची-सी, कभी धीरे-धीरे मटक-मटककर चलती, कभी एकदम चंचल होकर छलांग लगाती और इश्तियाक के कन्धे पर जाके बैठ जाती और प्यार से उसकी गर्दन चाटने लगती। कभी ऊन का गोला बनी हुई पायंती पर बैठकर धूप का मजा लेती, कभी उसकी बांहों में पूरी फैलकर लेट जाती—नारी के पूर्ण समर्पण की मुद्रा में। कभी शरारत-भरी उपेक्षा की मुद्रा में एक मस्त अंगड़ाई लेती और जब इश्तियाक उसे पकड़ना चाहता, तो बदन चुराकर भागने लगती और इश्तियाक एक विचित्र आनन्द और इच्छा से उसकी तरफ देखने लगता। इश्तियाक ने उसका नाम गुलशन रखा था मगर प्यार के जोश में उसे सिर्फ 'गुल्लो' कहकर पुकारता था।

एक दिन मेरी गैरहाज़िरी में इश्तियाक ने ज़रीना के बैडरूम पर दस्तक दी। सर्दियों के दिन आ चले थे इसलिए ज़रीना सुबह खत्म होने के बावजूद अपना नाइटगाउन पहने एक स्वेटर बुन रही

थी। "कौन है ?" ज़रीना ने पूछा।

"मैं हूं इश्तियाक।"

"अन्दर आ जाओ।" ज़रीना बोली।

कागज़-पेंसिल लिए हुए इश्तियाक झिझकते-झिझकते बहुत ही अदब से दरवाज़े से लगकर खड़ा हो गया। फिर उसने चुपके से कागज़-पेंसिल आगे बढ़ा दिया और बोला, "लिखिए !"

ज़रीना बोली, "क्या कल का हिसाब है ? अभी नहीं, बाद में देख लूंगी।"

"हिसाब नहीं है।"

"फिर क्या है ?"

"आप लिखिए तो···" इश्तियाक बार-बार कागज़ और पेंसिल आगे बढ़ा रहा था। ज़रीना ने कागज़ और पेंसिल थामकर ज़रा सख्ती से पूछा, "आखिर है क्या ?"

"एक ग़ज़ल के तीन शेर हुए हैं।"

ज़रीना कुछ पल के लिए भौचक्की रह गई। फिर उसके मन में हंसी फूटने लगी। मुस्कराकर बोली, "तुम खुद नहीं लिख सकते ?"

"जी नहीं, मैं न लिख सकता हूं ! न पढ़ सकता हूं।"

"मगर शेर कह सकता हूं !" ज़रीना ने वाक्य पूरा किया।

"जी ! जी ! बिलकुल कह सकता हूं। आप लिखिए, मैं बोलता हूं।"

"कहिए···" ज़रीना ने तंग होकर कहा।

इश्तियाक ने अपनी आंखें बन्द कर लीं और एक विचित्र तन्मयता की दशा में बोला :

"'तनहाई' मेरा नाम है, गुलशन तेरा नाम है, जो हो सो हो;
हम मरते हैं तुझ पर, तू डरती है मुझसे, जो हो सो हो।"

"मगर इसकी बहर क्या है ?" ज़रीना ने पूछा।

6091

"बहर ?" इश्तियाक ने हैरत से आंखें खोलकर पूछा, "बह-हाल गजल तो गजल है।",

"मगर इसका मतलब ?" जरीना ने फिर तअज्जुब किया।

"बड़ी मजेकी गजल है, बेगम साहब आप लिखिए तो!" इश्तियाक ने पूरी दिलजमई से कहा। बड़ी मुश्किल से जरीना ने अपनी हंसी रोकी, बोली, "आगे चलिए।"

इश्तियाक ने फिर आंखें बन्द कर लीं और कहीं गहरी समाधि में जाकर बोला :

"तेरी जुदाई में हुए हम मस्त फिगार, जो हो सो हो;
कहता है 'तनहाई' अब गुलशन में कौन आया, जो हो सो हो।"

जरीना ने पूछा, "कहता है तनहाई···मगर तनहाई तो स्त्री-लिंग है।"

"मगर तनहाई तो मेरा तखल्लुस है और मैं स्त्रीलिंग नहीं हूं।" इश्तियाक ने समझाया। उसके चेहरे पर कुछ ऐसी मुस्कराहट थी जैसे वह कुछ कहना चाहता हो—अजी बेगम साहब ! यह शेरो-शायरी है, आप क्या जानें !

"और यह मस्त फिगार कहां की तरकीब है, तनहाई साहब !" जरीना ने फिर पूछा।

"हमारे मुरादाबाद में ऐसा ही बोलते हैं।" इश्तियाक ने जवाब दिया।

जरीना ने एकदम कागज-पसिल बैडरूम की खिड़की से बाहर फेंक दिए। गरजकर बोली, "इश्तियाक, अगर आज के बाद तूने कभी मुझे अपना कोई शेर सुनाया, तो खड़े-खड़े घर से बाहर निकाल दूंगी।"

इश्तियाक ने खिसियाकर सिर झुका लिया। फिर सिर खुजाने लगा। बेहद झेंपा और शर्मिन्दा-सा दिखाई [illegible] को उस-

पर रहम आ गया। नर्म लहजे में मुस्कराकर कहने लगी, "मेरे ख्याल मे अगर आप शेरो-शायरी छोड़कर नाविल लिखने की तरफ ध्यान दें, तो बेहतर होगा।"

फौरन सिर उठाकर बोले, "एक नाविल भी तैयार कर कहा हूं।"

"क्या नाम है ?" जरीना ने पूछा।

"लाइफ एण्ड कुक।" इश्तियाक अंग्रेजी मे बोला।

५

इश्तियाक की अंग्रेज़ी ऐसी थी जैसे पुराने ज़माने में उन बाव- र्चियों की हुआ करती थी जो अंग्रेज़ों के यहां काम करते थे, आजकल के उन मज़दूरों की जो अनपढ़ होने के बावजूद टेक्नीकल धन्धों में पड़ जाते हैं। यह अंग्रेज़ी बड़ी संक्षिप्त किन्तु व्यापक अर्थ देने वाली होती है और प्रायः किसी धातु-क्रिया आदि की मुहताज नहीं होती, मगर अपना आशय प्रकट करने में उस अंग्रेज़ी से कहीं बेहतर होती है जिसे आजकल विद्यार्थी मैट्रिक तक पढ़ते हैं।

एक दिन जब इश्तियाक मेरे सिर की चम्पी से फ़ारिग हो चुका तो मैंने उससे कहा, "तुम इतने ढेर सारे धन्धे जानते हो, लेकिन अगर तुम किसी एक धन्धे को पकड़कर बैठ जाते तो ग़ालिबन बहुत तरक्की कर जाते।"

"साहब, मेरा किसी काम में जी नहीं लगता," इश्तियाक एक छोटे-से तौलिये से हाथ साफ करते हुए बोला, "साल-छः माह धन्धा किया, फिर दूसरे में चला गया। इस तरह ज़िन्दगी के पैंतीस-छत्तीस बरस गुज़ार दिए हैं। बाकी भी ऐसे ही गुज़र जाएगी।"

"तो तुम किस एक धन्धे में जी क्यों नहीं लगाते?" मैंने पूछा।

"जी नहीं लगता।" इश्तियाक सिर झुकाके किसी इकबाली

मुजरिम की तरह शर्मिन्दा होके बोला, "मेरा सीना हर वक्त खाली-सा रहता है।"

"म्याऊं।"

दरवाज़े पर गुल्लो तशरीफ लाई और मुंह उठाके बड़ी-बड़ी आंखों से इश्तियाक की तरफ देखने लगी। इश्तियाक ने उसे गोद में उठा लिया और उसके बालों पर धीरे-धीरे हाथ फेरते हुए बोला, "गुल्लो भूखी है, इसे दूध दे आऊं।"

"जाओ।"

इश्तियाक पर कभी-कभी जहनी गशी के लम्बे-लम्बे दौरे पड़ते हैं जबकि वह घंटों अपने ख्यालों में डूबा हुआ किचिन में गायब बैठा रहता है। जाने क्या सोचता है वह? खुद ही मुस्कराता है, खुद ही घूरता है, खुद ही सिसकने लगता है। कभी-कभी मुंह में बुदबुदाने लगता है। क्या गुजरती है उसपर? वह कौन-सी वेदना है जो उसे भीतर ही भीतर खाए जाती है—कौन जाने! कुछ बताता तो है नहीं। कभी-कभी नशा भी करता है। मेरा पक्का अनुमान है कि जब दिल की घुटन और सीने का सूनापन हद से गुजरने लगता है तो कोई नशा जरूर करता है, क्योंकि महीने में एक-दो दिन ऐसे जरूर आते हैं जब इश्तियाक कोई काम नहीं कर सकता। सारा दिन तकरीबन नीमगशी की हालत में अपनी चारपाई पर पड़ा रहता है और सीना उसका हौंकता रहता है; और दो दिन के बाद जब वह होश में आ जाता है तो इसरार करता है कि न दिन बदला है, न तारीख बदली है, न उसने कोई नशा किया है। हम भी इसलिए चुप रहते हैं कि अपना काम बहुत अच्छा करता है। माहिर ही नहीं आर्टिस्ट है अपने काम में; और कलाकारों के दिमाग की एक-एक चूल तो ढीली होती ही है—यह सब जानते हैं।

इसलिए कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि उससे कहा है हैदराबादी बैंगन पकाने को और मेज़ पे आया कुछ अजीब-सी डिश, जिसमें शोरबा पानी की तरह पतला था और उसके अन्दर बैंगन के काले काले टुकड़े मरे हुए चूहों की तरह तैर रहे थे।

"ये हैदराबादी बैंगन है ?" ज़रीना खीजकर पूछती है।

"जी नहीं, यह चाइना टाउन है," इश्तियाक कहता है, "बिलकुल नई डिश है। खाके देखिए, चखिए, चखिए, बिलकुल नया मज़ा है।"

"उठाके ले जा अभी यहां से, वरना तेरे सिर पर दे मारूंगा।" मैं गरजकर कहता हूं। क्योंकि मुझे तो उस डिश को देखकर ही मितली होने लगी थी।

उस वक्त तो इश्तियाक डिश उठाके ले गया, मगर बाद में उसने ज़रीना से कहा, "साहब भी कैसी नाइंसाफी करते हैं ! चखे बगैर नापास कर देते हैं खाने को···"

इश्तियाक मोती कलिया बहुत उम्दा पकाता है। एक दफा घर पर चन्द खास मेहमानों की दावत थी। इश्तियाक से मोती कलिया पकाने की फरमाइश की गई। जब दस्तरख्वान बिछा तो दूसरी चीज़ों के साथ एक निहायत बदबूदार और सड़ी हुई सी डिश सामने आई।

"यह मोती कलिया है ?" ज़रीना ने हैरत से पूछा।

"जी नहीं," इश्तियाक फौरन बोला, "यह स्पेट है।"

"स्पेट क्या ? तुम्हें तो मोती कलिया तैयार करने को कहा था···कहा था कि नहीं ?" ज़रीना खफा होके बोली।

"जी, मोती कलिया बिगड़ गया इसलिए मैंने नई डिश तैयार कर दी।"

इश्तियाक की यह आदत अब हमें मालूम हो चुकी है कि जब कोई सालन बिगड़ जाता है तो वह उसे फौरन कोई नया नाम

देकर दस्तरख्वान पर पेश कर देता है और बिना बिगड़ने का यों वर्णन करता है जैसे किसी आला खानदान का लड़का खुदबखुद बिगड़ जाए और उसके बिगड़ने में उसका कोई हाथ न हो।

अब क्या कहूँ ? चन्द ऐसे मेहमानों की दावत थी जिनके सामने मैं बेतकल्लुफ नहीं हो सकता था, वरना आज मेरा इरादा इश्तियाक से बेतकल्लुफ होने का था। मगर मेहमान मौजूद थे और दूसरे सालन बेहद उम्दा थे इसलिए खामोश रह जाना पड़ा।

दोपहर के खाने के बाद हम अपने मेहमानों को लेकर मैटनी शो देखने चले गए। ज़रीना ने इश्तियाक को रात के खाने के सम्बन्ध में हिदायतें दे दीं। मैटनी शो देखके जब हम शाम को वापस आए, तो देखा घर के बाहर फायर ब्रिगेड खड़ा है। बहुत से लोग जमा हैं और किचिन की चिमनी और छत और खिड़कियों से धुएं के बादल उठ रहे हैं।

"आग ! आग ! मेरा घर बचाओ !" लैण्डलॉर्ड ज़ोर-ज़ोर से चीख रहा था।

"इश्तियाक कहां है ?" मैंने पूछा।

"क्या मालूम ?" लैण्डलार्ड अपने सिर के बाल नोचता हुआ बोला, "एक घण्टे से चीख रहा हूं। दरवाज़ा ही नहीं खोलता। अन्दर किचिन में शायद नशा करके बेहोश पड़ा है।"

मैंने और ज़रीना दोनों ने चिल्ला-चिल्लाकर इश्तियाक से दरवाज़ा खुलवाया। इश्तियाक बेहद हैरतज़दा किचिन से निकला। वह धुआं देखकर पलटा और किचिन की दोनों अंगीठियों पर पानी डालकर बुझाने लगा। दोनों पतीलियों के सालन जल चुके थे मगर खुदा जाने उनमें उसने कौन-सा मसाला डाला था कि धुएं के गहरे स्याह बादल अब तक उन पतीलियों से उठ रहे थे।

"आग ! आग !!" लैण्डलार्ड गुस्से से चीख रहा था।

"किधर है आप !" इश्तियाक़ हैरत से पूछने लगा।

ज़रीना बोली, "मैं बेचारी एक घण्टे से चीख रही हूँ, दरवाज़ा पीट रही हूं और तुम्हें कुछ पता ही नहीं। आखिर ब्रिगेड तक आवाज़ गई और तुम किस ग़म में दरवाज़ा बन्द किए ग़ाफ़िल बैठे हो !"

इश्तियाक़ सब लोगों का ध्यान अपनी तरफ़ देखकर कुछ चौंका। शर्मिन्दा होकर सिर झुकाने लगा। एक उंगली अपनी खोपड़ी पर रखकर बोला :

"बहस चल रही थी।"

"कैसी बहस ?" ज़रीना का पारा चढ़ने लगा, "तुम तो यहां अकेले बैठे हो ?"

"कोर्ट में मुकदमा था।"

"कैसा मुकदमा ?"

"आबाई मकान का मुकदमा था मेरे और चचाज़ाद भाई सलीम के दरम्यान। वकील-इस्तगासा और वकील-सफ़ाई में बहस हो रही थी।"

"किधर हैं वकील-इस्तगासा और वकील-सफ़ाई ?" ज़रीना के गुस्से का पारा और चढ़ने लगा।

"मैं खुद दोनों तरफ़ से वकील हूं। खुद ही कोर्ट हूं, खुद ही मुद्दई, खुद ही मुद्दालय। खुद ही बहस करता था, खुद ही ज़वाब देता था।" इश्तियाक ने बताया।

"मगर कहां बहस चल रही थी ?" ज़रीना ने दांत पीसकर उससे पूछा।

"यहां !" इश्तियाक ने अपनी खोपड़ी पर उंगली रखकर कहा और सिर झुका लिया।

६

जरीना का दिल इश्तियाक से हटने लगा। मेरा भी। उम्दा ावर्ची होने के बावजूद उसकी खामियां अब जानलेवा साबित होने ागीं। इश्तियाक से ज्यादा उसकी बिल्ली बी गुलशन ने मुझे तंग ार डाला था। मैं दरअसल इश्तियाक की वजह से उसकी उपेक्षा ारता था, क्योंकि इश्तियाक नहीं चाहता था कि उसके सिवा कोई ौरा उसकी बिल्ली पर ध्यान दे। मगर शायद गुलशन को यह बात ासन्द न थी। वह मुझे भी अपने चाहने वालों की सूची में शामिल ारने पर तुली थी। एक बार वह मेरे कमरे में इठलाती हुई आई, ागर मैंने धुत्‌-धुत्‌ कहकर भगा दिया। फिर मेरी गैरहाजिरी में एक ार वह मेरे बिस्तर पर चढ़कर सो गई। दरअसल सोई न थी, सोने ा बहाना कर रही थी। वक्त भी बी गुलशन ने वह चुना था जो मेरे ादफ्तर से आने का था। मकसद यह था कि देखो, हम तुम्हारे बिस्तर ार चढ़के सोएंगे और अगर तुम इसे बरदाश्त कर गए, तो दूसरी बार ुम्हारे सीने पर चढ़कर सोएंगे। यानी जिस कदर मैं उपेक्षा बरत ारहा था उसी कदर वह मुझे अपने करीब लाने पर बजिद थी। उस क्त मैंने जो उसे बिस्तर पर सोए हुए देखा तो गुस्से में आकर उसे ादुम से पकड़ा और बिस्तर के नीचे फेंक दिया। बेहद खफा होके ुर्राई और झल्लाकर कमरे से बाहर चली गई। मगर उसका बदला ुलशन ने यों लिया कि दूसरे दिन दफ्तर से जो आया, तो क्या देखता

हूं कि कमरे में सेमल की रेशमी रुई के दोनों तकिये उधड़े पड़े हैं और गुलशन उन्हें पंजे मार-मारकर नोच रही है और सेमल को हवा में उड़ा रही है।

मेरी आंखों में खून उतर आया। झापड़ा मारने के लिए हाथ जो बढ़ा तो गुलशन छलांग लगाकर दरवाज़े से बाहर; और चिल्लाने लगी, "म्याऊं-म्याऊं!" मगर आज मैंने भी कसम खा ली थी कि आज मैं इस हरीफा को जिन्दा नहीं छोड़ूंगा। मैंने सहन का दरवाज़ा बन्द कर दिया और ड्राइंगरूम से बैडरूम और बैडरूम से किचिन, किचिन से सहन, सहन से बाथरूम तक गुलशन के पीछे-पीछे भाग कर आखिर मैंने उसे पकड़ लिया और दोनों हाथों में दबाकर उसे घर से बाहर ले चला। इश्तियाक मजबूर और सहमा हुआ मेरे पीछे-पीछे आने लगा। मगर मेरे गुस्से को देखकर मुंह से कुछ बोल नहीं रहा था। सिर्फ उसके होंठों के कोने फड़क रहे थे।

बड़ी सड़क पर आकर मैं एक कोने में खड़ा हो गया। इस सड़क पर खड्डे और गड्ढे थे और उसपर अनगिनत वजनी ट्रक घूं-घूं करते हुए गुज़रते थे। मैंने एक ट्रक को करीब आते हुए देखकर यकायक गुलशन को ज़ोर से झुलाया और निशाना बांधकर गुज़रते हुए ट्रक के नीचे फेंक दिया।

इश्तियाक के गले से एक घुटती हुई चीख निकली।

ट्रक सड़क पर से गुज़र गया। चन्द लम्हों तक ऐसा महसूस हुआ जैसे गुलशन सड़क पर पिसकर लम्बी होकर पिचक गई है। फिर यकायक वह चौंककर खड़ी हुई और विरोधी दिशा को चली गई। दो-एक बार उसने पलटकर हमारी तरफ देखा, मगर इधर हमारे घर की तरफ आने के बजाय वह सामने की तरफ दौड़ती हुई चली गई, और फिर कभी हमारे घर नहीं आई।

तीन दिन तक इश्तियाक ने इन्तज़ार किया। मगर गुलशन

कहीं नजर नहीं आई। चौथे दिन उसने सामान बांध लिया और बोला :

"साहब ! मेरा हिसाब कर दीजिए। मैं जाना चाहता हूं।"

"क्यों, तुम्हें यहां क्या तकलीफ है ?" जरीना ने पूछा।

इश्तियाक ने मुझसे आंखें चुराके जरीना से कहा, "बेगम साहब, जिस तरह साहब ने मेरी बिल्ली से सुलूक किया है, वह मैं बरदाश्त नहीं कर सकता।"

"और वह जो तुम्हारी बिल्ली ने मेरे चालीस रुपये के दो कीमती तकिये फाड़ डाले उनका हर्जाना कौन देगा ?" मैंने गुस्से से ...न्द आवाज मे कहा।

जरीना मामले को सुलझाने के ख्याल से बोली, "अरे, एक ...ल्ली की वजह से लगी-लगाई नौकरी छोड़ता है। मैं तुझे ऐसी-...सी दस बिल्लियां ला दूंगी।"

"नहीं, वह तो मेरी गुलशन थी।" इश्तियाक की आवाज कम-...र होकर लरजने लगी जैसे वह अभी रो देगा।

"अरे, गुलशन थी कि जुल्फन कि करीमन, जो नाम चाहे रख ...ा।" मैंने भी उसे ठंडा करने की कोशिश करते हुए कहा, "सैकड़ों ...ल्लियां घूमती हैं इस इलाके में।"

इश्तियाक ने फिर मुझसे नजरें चुराकर, रुख मोड़कर जरीना ...तरफ देखा और बोला, "मुझे साहब से बड़ा डर लगता है अब ...।"

"क्यों ?" जरीना ने पूछा।

"साहब ने गुलशन को उठाकर सड़क पर फेंक दिया, तो मुझे ...ा चेहरा बिलकुल अपने बाप की तरह नजर आया।

"तुम्हारे बाप की तरह ? क्या बकते हो ?" जरीना गुस्से से ...।

इश्तियाक दो-एक क्षणों के लिए रुका, फिर गम्भीर लहजे में कहने लगा, "इसी तरह मेरे बाप ने एक दिन नशे की हालत में मुझे कमरे से उठाकर बाहर सड़क पर पटक दिया था। उस वक्त मेरी उम्र सिर्फ चार साल की थी। मैं यकीनन मर जाता, मगर सड़क पर जहां मैं गिरा वहां एक बड़ा-सा गड्ढा था और मैं उस गड्ढे से बाहर नहीं निकल सका। और रात का वक्त था और दो-एक ट्रक मेरे सिर पर से गुज़र गए। फिर शायद मैं बेहोश हो गया। मेरी मां दुहत्थड़ मारकर चीखने लगी। यकायक मेरे बाप को होश आ गया और भागा-भागा आया और सड़क के गड्ढे से मुझे उठाके, अपने सीने से लगाके घर ले गया। और वह मेरा मुंह चूमता था और ज़ोर-ज़ोर से रोता था। और कभी मेरी मां मुझे उससे छीनकर अपने सीने से लगा लेती थी और कभी मेरा बाप मुझे मेरी मां से लेकर अपनी छाती से लगा लेता था। मगर मैं अपने बाप का वह चेहरा कभी नहीं भूल सकता जब उसने मुझे गुस्से में अपने हाथों से उठाकर सड़क पर फेंक दिया था। बिलकुल ऐसा ही चेहरा था उस वक्त साहब का। इसलिए मेरा हिसाब कर दो। मैं यहां नहीं रहूंगा।'

इश्तियाक मेरे पांव को हाथ लगाने लगा जैसे अपनी गुस्ताखी की मुझसे माफी मांग रहा हो·····ज़रीना ने उसका हिसाब कर दिया।

७

तीन साल के बाद जब हमारा तबादला बम्बई में हो गया, तो वह हमें बम्बई में मिला। हमें एक घर की तलाश थी और इत्तिफ़ाक़ एक हाउस एजेन्ट था और उसका नाम अब लालूकरमानी था और वह सिन्धी था और सिन्धी भाषा बड़े फर्राटे से बोलता था। वह खद्दर का पाजामा और खद्दर का एक कुर्ता पहनता था और पहली नज़र में किसी मुहल्ला कमेटी का कांग्रेसी नेता मालूम होता था।

"ये क्या ढंग हैं तुम्हारे यहां पर?" ज़रीना ने अपने दोनों हाथ उठाकर उससे पूछा।

"इधर···!···बिल्डिंग का अच्छा धन्धा सिन्धी लोग के पास है। इसलिए हम भी सिन्धी बन गया है, बेगम साहब। क्या करें, पेट रोटी मांगता है।"

"कोई बिल्ली-बिल्ली पास रखी है, इधर भी?" मैंने उससे पूछा।

वह शर्मिन्दा हो गया। आंखें झपकाते हुआ बोला, "इधर बम्बई में ज़िन्दा रहना भी मुश्किल है। एक ईरानी होटल के मालिक ने तरस खाकर मेरा ट्रंक और बिस्तर अपने बावर्चीख़ाने में रखने की इजाज़त दे दी है। रात को उसकी दूकान के आगे पड़ रहता हूं। सुबह ग्यारह बजे तक उसकी दूकान में समोसे बनाता हूं। फिर रामदास मार्कीजानी के दफ्तर में जाता हूं

"यह मालिकानों कौन है ?" जरीना ने पूछा।

"जमीन के मालिक एजेण्ट भी नहीं है। मैं उनका इक ऑथराइज्ड हूं।"

"तुमको क्या मिलता है ?"

"कमीशन मिलता है।"

"कितना ?"

"मालिकानों को ट्वेन्टी परसेण्ट मिलता है। पहले अलॉटी को फायू परसेण्ट मिलता है।" इश्तियाक अंग्रेजी बघारने लगा, "हमको वन परसेण्ट।"

"वन परसेण्ट ? वन परसेण्ट आफ व्हाट ?" जरीना ने पूछा।

इश्तियाक बोला, "वन परसेण्ट आफ दी फायु परसेण्ट, आफ दी टुअण्टी फायु परसेण्ट, आफ दी हण्ड्रेड परसेण्ट।"

जरीना हंसते-हंसते लोटपोट हो गई। इश्तियाक खुद भी बहुत प्रसन्न हुआ। आखिर जब जरीना ने किसी तरह से अपनी हंसी पर काबू पा लिया, तो बोला, "आपको एक फ्लैट दे सकता हूं।"

"कैसा है वह फ्लैट ?"

इश्तियाक उंगली पर कमरे गिनवाते हुए बोला, "वन बैडरूम, वन बाथरूम, वन बैडरूम मोर, वन किचिन, वन हाल, एण्ड सपरेटस।"

"यह 'एण्ड सरपरेटस' क्या बला है ?" जरीना ने पूछा।

"यस एण्ड सपरेटस।" इश्तियाक ने इस हैरत से जरीना की तरफ देखा गोया कह रहा हो, एम० ए० करने के बावजूद इतनी मामूली-सी अंग्रेजी नहीं समझ सकतीं आप। 'एण्ड सपरसेट, बेगम साहब !" इश्तियाक ने फिर समझाया।

जरीना ने यकायक समझकर कहा, "अच्छा, तुम्हारा मतलब है 'आल सेप्रैट' यानी हर कमरा दूसरे से अलग-अलग है ?"

"यस एण्ड सपरेटस।" इश्तियाक के चेहरे पर उच्चताभास भाव की ऐसी झलक आई गोया कह रही हो—ओफ्फोह। कितनी देर से बात आपकी समझ में आती है!

ज़रीना फिर हंसने लगी। मैंने बात टालने की गरज से कहा, और भी कुछ काम करते हो?"

"जी हां, एक टूथपेस्ट तैयार किया है 'मेरी टूथपेस्ट'।"

"यह 'मेरी' कौन है?" ज़रीना ने चौंककर पूछा।

शर्माकर बोला, "एक छोकरी है।"

"तुम्हारी मंगेतर?"

"जी नहीं," सिर हिलाकर बोला, "हमारे होटल में एक ईसाई बुढ़िया काम करती है, उसकी एक छोकरी है कोंकण के गांव में। यह बुड्ढी अपनी छोकरी की शादी बनाता है।"

"तुम्हारे संग?" ज़रीना ने खुश होकर पूछा।

"नहीं, किसी ईसाई छोकरे के संग। अल्फ्रेड उसका नाम है। वह भी उधर कोंकण के गांव में रहता है। मगर बुड्ढी बहुत गरीब है। उसके पास पैसा नहीं है। इसलिए हमने 'मेरी टूथपेस्ट' निकाला है और उसको शाम के टाइम में बेचता है और उसका पैसा उस क्रिश्चियन बुड्ढी को देता है।"

"ताकि वह अपनी छोकरी की शादी तुम्हारे सिवा कहीं और कर सके?" ज़रीना ने बेहद तल्ख होकर पूछा।

यकायक इश्तियाक सिटपिटा गया। उसकी आंखों की पुतलियां जल्दी-जल्दी घूमने लगीं। उसके होंठों के कोने तेज़ी से फड़कने लगे और गाल भी अंदर को धंसते गए और उसका चेहरा एक ऐसी काली खोपड़ी की तरह नज़र आने लगा जिसपर सिर्फ खाल ही खाल मढ़ी हो। मुझे उसे देखकर बहुत रहम आया। वह उस वक्त ज़रीना से नज़र चुराकर यों चारों तरफ देख रहा था जैसे चारों तरफ दीवारें

लगातार गिर रही हों और उनके बच निकलने का कोई रास्ता न हो।

मैंने जल्दी से बात का रुख फेरते हुए पूछा, "शेरो-शायरी जारी है ?"

उसने इन्कार में सिर हिलाया।

"क्यों ?" मैंने पूछा।

"अब तो एक फिल्मी कहानी लिख रहा हूं।" इश्तियाक ने बड़े गर्व से ऐलान किया। वह अपनी घबराहट पर काबू पा चुका था।

"हीरो कौन है ?" मैंने पूछा।

"इश्तियाक !" अपना नाम लेकर बोला, "डबल रोल है इश्तियाक का इस पिक्चर में।"

"और विलेन कौन है ?" ज़रीना ने पूछा।

"शायद दिलीपकुमार निभा जाए !" इश्तियाक सोच-सोचकर बोला, "विलेन का रोल बहुत मुश्किल है।"

ज़रीना ने हंसी रोकने के लिए अपने मुंह में दुपट्टा ठूंस लिया

"और हीरोइन ?" मैंने पूछा।

"फिल्म इंडस्ट्री में कोई है नहीं…" इश्तियाक संजीदा होकर बोला, "बाहर देख रहा हूं।"

"फिल्म इंडस्ट्री में कोई नहीं है ?" मैंने पूछा, फिर उसका अंग्रेजी फिकरा मैंने दोहराकर पूछा, "बिल्कुल नहीं है ! नाट इवन वन परसेण्ट, आफ दी फायु परसेण्ट, आफ दी टुअण्टी-फायु परसेण्ट, आफ दी हण्ड्रेड परसेण्ट ?"

"नो सर !" इश्तियाक ने सिर हिलाकर कहा।

"तो उस फिल्म के गाने कौन लिखेगा ? तुमने तो शायरी तर्क कर दी।"

"जी !" इश्तियाक अपने हाथ में एक नाखून को दूसरे नाखून से कुरेदते हुए बोला, "शायरी [illegible]ड दी है मगर [illegible] के गाने

तो मैं ही लिखूंगा। एक टुकड़ा कहा है।"

"क्या ?"

निगाहें नीची किए आखों के कोनों से डरते-डरते चोर-निगाहों से जरीना की तरफ देखते हुए बोला, "साहब ! बात यह है कि गजल से बेगम साहब ने हमको बहुत डरा दिया है कि उसका वजन बहुत बड़ा होता है इसलिए हमने गजल को छोड़ दिया। मगर फिल्मी गीत में हम देखते हैं कि उसका वजन छोटा होता है। क्या मतलब कि छोटे-छोटे टुकड़े होते हैं और बीच-बीच में म्यूजिक आता जाता है। इसीलिए हमने एक फिल्मी गीत शुरू किया है उसी तरह छोटे-छोटे टुकड़ों वाला।"

"सुनाओ।" मैंने बेचैन होकर कहा।

इश्तियाक ने खखारके गला साफ किया। बोला :

"ओ सनम ! ओ सनम !
मैंने लिया
उल्लू का जनम
ओ सनम
तेरे लिए !"

जरीना की बुरी हालत थी। मुंह में दुपट्टा ठूसते-ठूसते उसका चेहरा लाल होता जा रहा था। बड़ी मुश्किल से मैंने भी अपनी हंसी रोकी और उससे पूछा, "मगर उल्लू का जन्म क्यों, इश्तियाक ?" रोकने के बावजूद मेरी हंसी मेरे सवाल से बाहर छलकी पड़ती थी।

"उल्लू का जन्म इसलिए, साहब," इश्तियाक ने गहरी सजीदगी से कहा, "कि इश्तियाक को यानी फिल्म के हीरो को रात में नींद नहीं आती है हीरोइन के फिराक में···हीरोइन के फिराक में वह रात-रात-भर जागता है और उल्लू भी रात को जागता है।

इसलिए…! बात को मुनासिब समझा। जरा सोचिए। क्या नहीं इसीलिए सलाम किया है!"

"अरे उल्लू के पट्ठे!" जरीना ने दुपट्टा मुंह से निकालकर एकाएक चीखकर कहा, "भाग जा यहां से, वरना अभी नकल बनाकर इसे मारूंगी…"

जरीना सामान उठाने लगी।

इखलाक भाग खड़ा हुआ।

८

इश्तियाक का कारोबार ईरानी होटल वाले के यहां खूब चमक गया। पहले वह सिर्फ समोसे बनाता था, फिर उसने ईरानी होटल के मालिक को दर्रे पर लगाकर उसे शाही टुकड़े बेचने की प्रेरणा दी।

"बहुत सस्ते में बन जाएगा सेठ। तुम्हारे इधर डबलरोटी का टुकड़ा बेकार में फिकता है, हम उसको काम में लाएगा। खाली शक्कर का खर्च है और थोड़ी-सी मलाई का।" इश्तियाक ने उसे समझाया, "और तुम्हारे पास एक छोड़ तीन रेफ्रीजरेटर हैं। एक रेफ्रीजरेटर में शाही टुकड़ा रखेगा। गाहक लोग को ठंडा-ठंडा सर्व करेगा।"

ईरानी मान गया क्योंकि खर्च बहुत कम था इस मिठाई का। पहले दिन इश्तियाक ने जो शाही टुकड़ा बनाया, तो वह दो आने फी टुकड़े के हिसाब से हाथों-हाथ बिक गया।

ऐसी उम्दा डिश जिससे पेट भी भरे और मिठाई की मिठाई भी मालूम हो, ईरानी होटल में बैठनेवालों ने आज तक काहे को खाई थी! अब तो यह हालत हो गई कि इश्तियाक को दिन में दो बार शाही टुकड़े तैयार करने पड़ते और बिक्री बढ़ते देखकर ईरानी होटल के मालिक ने इश्तियाक को अपने किचिन का हेड कुक नियुक्त कर दिया। किचिन में काम करने वाले नौकर अब इश्तियाक को

उस्तादजी कहकर पुकारते थे और होटल का मालिक इश्तियाक को नाही टुकड़े के मानिन्द 'मेरे दिल का टुकड़ा' कहता।

अगर मैंने कभी इश्तियाक के जिस्म और मुंह पर बहार आते हुए देखी है, तो वे यही दिन थे। उसके गाल भरने लगे और काले कनपटियों पर उजाला झलकने लगा। और वे किश्तियां उसकी पुतलियों की, जो उसकी आंखों में हर वक्त बेचैन और उद्विग्न होकर तैरती-सी रहती थीं, अब बम्बई के साहिल पर लंगर डालती हुई मालूम होती थीं। जहां इश्तियाक ने हमें मकान दिलवाया था उसके करीब कोई एक फर्लांग के फासले पर वह ईरानी का होटल था, चौक के नुक्कड़ पर। सामने टैक्सियों का अड्डा था और करीब में एक नया मार्केट खुल गया था। इसलिए सुबह से शाम तक इस ईरानी होटल में बड़ी भीड़ रहती थी। बूट पालिश करने वाले और पान बेचने वाले और भेल-पूरी की चाट बेचने वाले और आसपास के घरों और बंगलों के नौकर-चाकर और कालेजों टिडी ब्वायज और काम की तलाश में घूमने वाले बेकार और आवारागर्द जो कालेज के लड़कों से ज्यादा टिडी मालूम होते थे—उन सबका जमघट इस होटल के अन्दर और बाहर रहता था।

इस होटल में इश्तियाक बहुत पॉपुलर हो गया था। आते-जाते में उसे देखता था। तीसरे पहर तक तो वह अपने मलगजे कपड़ों में कभी किचिन के अन्दर कभी किचिन के बाहर मुस्तैदी से काम करता दिखाई देता। कोई चार बजे के करीब वह नहा-धोकर गेरुए रंग का बंगाली कुर्ता और उसके नीचे खुले पांयचों वाला पाजामा और चप्पल पहनकर ईरानी होटल के बाहर आ खड़ा होता। उस वक्त उसे काम की तलाश में आए हुए इधर-उधर से बहुत-से लौंडे घेर लेते। वह इधर-उधर के बंगलों और [illegible] लड़कों को नौकर करा देता, क्योंकि हा[illegible] का [illegible] की वजह

से आसपास की बिल्डिंगों में उसकी खासी जान-पहचान हो गई थी। जिन लौंडों को वह नौकरी न दिलवा सकता उन्हें दूसरे दिन आने का मशवरा देकर चलता करता। फिर बीड़ी सुलगाकर वटक लाड्री के मालिक से बातें करता जो उसका हमवतन था यानी मुरादाबाद का रहनेवाला था और जिसके लिए वह एक निहायत ही उम्दा और निहायत ही सस्ते किस्म का साबुन बनाना चाहता था जिसमें खर्च कम हो और कपड़े भी बहुत उम्दा धुल जाएं। मगर इश्तियाक अभी अपनी ईजाद मे कामयाब न हुआ था।

वटक लांड्री से फारिग होकर वह अपने हाउस एजेण्ट के यहां चला जाता या नये ग्राहकों को लेकर मकान दिखाने के लिए चला जाता। रात के नौ-दस बजे फारिग होकर ईरानी होटल में खाना खाता। फिर एक कप चाय पीकर और फिर बीड़ी सुलगाकर और पान खाकर वह सन्नू बावर्ची के झोपड़े में जाकर सो रहता, क्योंकि वह बड़ा आदमी हो गया था, वह अब ईरानी होटल के बाहर नहीं सो सकता था। सन्नू बावर्ची का झोपड़ा बारहवीं नम्बर की सड़क के पीछे एक छोटे-से खाली प्लाट पर था और उसकी बीवी बच्चा जनने के लिए अपने मैके टेहरी गढ़वाल के किसी गाव मे गई हुई थी और कही चार माह बाद वापस आने वाली थी। जब तक इश्तियाक सन्नू के झोंपड़े मे रह सकता है""""सन्नू ने उस्तादजी से कहा था।

शाही टुकड़ो की रोज बढ़ती बिक्री को देखकर मैंने अन्दाज़ा किया कि अब इश्तियाक के कदम यहां जम जाएंगे। इसलिए दो माह के बाद मुझे बड़ी हैरत हुई जब ईरानी होटल के मालिक ने मुझे बताया कि उसने इश्तियाक को निकाल दिया है।

"क्यों ?" मैंने पूछा, "कोई गबन किया है ?"

"नहीं, आज तक एक पैसे का गबन नहीं किया," ईरानी होटल

का मालिक बोला।

"फिर, क्या काम में गड़बड़ करता था?"

"नहीं, काम तो बहुत अच्छा करता था?"

"फिर?"

ईरानी होटल के मालिक ने कुछ कहने के लिए मुंह खोला। फिर जल्दी से बन्द कर लिया। फिर एक ठंडी सांस भरी और बोला, "साहब! उसका भेजा फिरेला है। हम उसको सत्तर रुपये पगार देता था। मगर पगार भी उसने खर्च कर दिया। ऊपर से पान सौ कप चाय और दो सौ स्लाइस का बिल हो गया।"

"पान सौ कप चाय और दो सौ स्लाइस!" मैंने हैरत से कहा, "इश्तियाक तो इतना पेटू कभी न था। वह तो बहुत ही कम-खुराक था।

"हम जानता है, इसलिए तो हम बोलता है," ईरानी होटल का मालिक खफा होके बोला, "वह खुद पान सौ क्या सात सौ कप चाय पीता तो हम उसको मना नहीं करता था। मगर वह खुद नहीं पीता; इधर-उधर के बेकार लफंगों, लौंडा लोग जो इधर-उधर आजू-बाजू बिल्डिगों में नौकरी बनाने के वास्ते आता है, वह उनको भूखे पेट देखकर चाय पिलाता था। जब हम मना करता था तो बोलता था—मेरे हिसाब में लिख लो। अब पान सौ कप चाय और दो सौ स्लाइस का बिल हो गया, तो हम उसको किसके हिसाब में लिखेगा? इसलिए हमने उसको निकाल दिया।"

"बहुत अच्छा किया।" मैंने ईरानी से कहा और पैसे काउंटर पर रखते हुए बोला, "एक डिबिया केवेण्डर की दो।"

"अजब मगज़ फिरेला है उसका," ईरानी ने मेरे पैसे गिनते हुए कहा, "दो पैसा कम है।"

"सारी।" कहकर मैंने जेब में हाथ डालकर उसे दो पैसे और

दिए और केवेण्डर की डिबिया लेकर उससे पूछा, तो इस्तियाक आजकल कहां पर है ?"

"जेल में।"

"जेल में ?" मैं हैरत से ईरानी की तरफ देखने लगा, "तुमने उस बेचारे को जेल पहुंचा दिया ?"

"हमने कहां पहुंचाया है साहब ! वह तो अपनी करनी से गया है, शराब की स्मगलिंग के धन्धे में।"

"अच्छा, यह धन्धा भी उसने शुरू कर दिया !"

"वह तो यह धन्धा नहीं करता साहब, मगर हमारा बावर्ची सन्तू अपने खाली टाइम में यह धन्धा करता था और इधर-उधर की बिल्डिंगों में रात को बाटली पहुंचाता था···" ईरानी बोला, "फिर एक रात पुलिस ने उसके झोंपड़े पर छापा मारा। छः बाटली पकड़ा गया, तो इस्तियाक बोला—सन्तू बेगुनाह है। मैंने ये छः बोतल शराब इधर लाके रखा था। इस वास्ते इस्तियाक को तीन महीने की सजा हो गई है।"

"उसने ऐसा क्यों बोला ?"

"वह बोला—हमारा क्या है ! हम अकेला आदमी है। तीन महीने की सजा चुटकी बजाते काट लेगा। मगर जब सन्तू की घर वाली अपने बच्चे को लेकर इस झोंपड़े में आएगी, तो झोंपड़ा खाली देखकर कितना रोएगी !"

लिए मोटर लाने को ?" तो इश्तियाक पहले उनकी गरज सुनकर सहम गया। फिर होले से सिर उठाकर बोला—साहब ! मैं नज्म का कहना नहीं टाल सकता। वे जो कहेंगे मैं जरूर लेकर आऊंगा। उसने ऐसे लहजे में उनसे बात की कि उनका सारा गुस्सा उतर गया। मुस्कराते हुए एक तरफ को सरक गए। मैं भी क्या बोलती, बहन, चुप होकर सरोते से सुपारी काटने लगी।"

जरीना खामोशी से मुस्करा-मुस्कराकर नुसरत की बातें सुनती रही, मगर उसने एक दफा भी नहीं बताया कि वह इश्तियाक को जानती है। न अगले एक साल में इश्तियाक ने एक बार भी बताया कि वह हम लोगों को पहले से जानता है। हमने सोचा—बेचारा जहां लगा है, लगा रहे। उसकी खामियां जताने से क्या फायदा ? और यहां जोरावर खां के यहां रहकर इश्तियाक बहुत ठीक हो चला था। बाल माथे पर नहीं लटकते थे। जहनी तौर पर बहुत कम गायब रहता था। कपड़े साफ-सुथरे पहनता था। शेरो-शायरी तर्क कर दी थी दिन-भर या तो किचिन में रहता या खां साहब के बच्चों की देख-भाल करता। हालांकि उनकी देखभाल के लिए दो आयाएं अलग से मुकर्रर थीं, मगर बच्चे जिस कदर इश्तियाक से हिल-मिल गए थे उतने घर के किसी दूसरे मुलाजिम से नहीं। मैंने और जरीना ने सुख का सांस लिया—चलो यह इश्तियाक नार्मल तो हुआ।

एक रात जोर की घंटी बजी। कोई तीन बजे का वक्त था। मैंने घबराकर दरवाजा खोला। बाहर सरदार जोरावर खां का ड्राइवर हामिद खड़ा था।

"हुजूर, जल्दी चलिए, बेगम साहब ने गाड़ी भेजी है।"

"क्या बात है हामिद ?" मैंने पूछा।

"इश्तियाक ने जहर खा लिया है।"

"अरे !" मेरे मुंह से निकला।

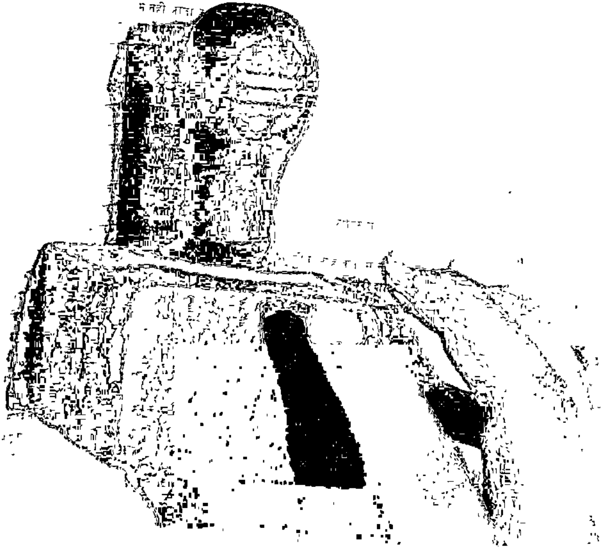

लिए मोहर लाने को ? तो इश्तियाक पहले उनकी गरज सुनकर सहम गया । फिर सीने से सिर उठाकर बोला—साहब ! मैं नज्म का मकता नहीं टाल सकता । ये जो कहेंगे मैं जरूर लेकर आऊंगा। उसने ऐसे लहजे में उनसे बात की कि उनका सारा गुस्सा उतर गया । मुस्कराते हुए एक तरफ को सरक गए । मैं भी क्या बोलती, बहन, चुप होकर सरोते से सुपारी काटने लगी ।"

जरीना खामोशी से मुस्करा-मुस्कराकर नुसरत की बातें सुनती रही, मगर उसने एक दफा भी नहीं बताया कि वह इश्तियाक को जानती है । न अगले एक साल में इश्तियाक ने एक बार भी बताया कि वह हम लोगों को पहले से जानता है । हमने सोचा—बेचारा जहां लगा है, लगा रहे । उसकी खामियां जताने से क्या फायदा ? और यहां जोरावर खां के यहां रहकर इश्तियाक बहुत ठीक हो चला था। बाल माथे पर नहीं लटकते थे । जहनी तौर पर बहुत कम गायब रहता था । कपड़े साफ-सुथरे पहनता था । शेरो-शायरी तर्क कर दी थी दिन-भर या तो किचिन में रहता या खां साहब के बच्चों की देख-भाल करता । हालांकि उनकी देखभाल के लिए दो आयाएं अलग से मुकर्रर थीं, मगर बच्चे जिस कदर इश्तियाक से हिल-मिल गए थे उतने घर के किसी दूसरे मुलाजिम से नहीं । मैंने और जरीना ने सुख का सांस लिया—चलो यह इश्तियाक नार्मल तो हुआ।

एक रात जोर की घंटी बजी। कोई तीन बजे का वक्त था। मैंने घबराकर दरवाजा खोला। बाहर सरदार जोरावर खां का ड्राइवर हामिद खड़ा था ।

"हुजूर, जल्दी चलिए, बेगम साहब ने गाड़ी भेजी है ।"

"क्या बात है हामिद ?" मैंने पूछा ।

"इश्तियाक ने जहर खा लिया है ।"

"अरे !" मेरे मुंह से निकला ।

'हाँ साहब, इश्तियाक ने जहर खा लिया है और खां साहब पूना में हैं। घर पर बेगम साहब के दो भाई हैं, मगर उनकी समझ में नहीं आता क्या किया जाए। डाक्टर मकसूद को टेलीफोन किया था बेगम साहब ने। मगर वे बोले—यह पुलिस केस है, मैं नहीं आ सकता और इश्तियाक मर रहा है।"

ज़रीना मेरे पीछे खड़ी थरथर कांप रही थी। लरजते हुए लहजे में बोली, "तुम जल्दी से चले जाओ, बेचारी नुसरत सख्त परेशान होगी।"

खां साहब के ड्राइंगरूम के ऐन बीचोबीच फर्श पर सिर से पांव तक ढंकी हुई एक लाश रखी थी और नुसरत और उसके दोनों भाई और घर के दूसरे मुलाज़िम हैरत में गुमसुम खड़े उसे देख रहे थे।

"क्या मर गया?" मेरे मुंह से बेअख्तियार निकला।

"नहीं, अभी तो ज़िन्दा है।" एक आया आहिस्ता से सिसकते हुए बोली।

मैंने चादर हटाकर नब्ज़ देखी। सीने के हौंकने में नरखरे की खरखराहट थी और नब्ज़ टूट रही थी। नुसरत एक भूरी शाल ओढ़े किस्परलोक से बेखबर अपनी फटी आंखों से चारों तरफ देख रही थी।

"कब इसने ज़हर खाया?" मैंने नुसरत से पूछा।

नुसरत कुछ नहीं बोली जैसे उसने मेरा सवाल सुना तक न हो। नुसरत का छोटा भाई बोला, "कोई दो बजे के करीब मैंने अपने बिस्तर के करीब किसी की आवाज़ सुनी। कोई आहिस्ता-आहिस्ता मुझे झिंझोड़कर जगा रहा था। जब जागा तो मालूम हुआ इश्तियाक है। वह बावर्चीखाने से रेंगता-रेंगता मेरे कमरे में पहुंचा और मुझसे कह रहा था—मुझे बचा लीजिए, मैंने ज़हर खा लिया है।

"मैंने पूछा कौन-सा शहर ?

"बोला—टिक टू !

"टिक टू क्या ?

"टिक टू ! टिक टू—उसकी जबान जहर से मोटी हो चुकी थी और आवाज में हकलाहट थी। वह कहना चाहता था टिक-टुअन्टी, लेकिन उसके मुंह से निकलता था सिर्फ टिक टू। फिर वह मेरी चार पाई से लगकर के बकने लगा।" नुसरत का भाई बता रहा था।

मैंने और दास्तान सुनना बेकार समझकर फौरन कहा, "इसे उठाकर नीचे गाड़ी में डालो, अस्पताल ले जाएंगे।"

"मगर पुलिस···?" नुसरत कांपकर बोली।

"पुलिस को वहीं से इत्तला कर देंगे," मैंने कहा, "नजदीक का अस्पताल कौन-सा है ?"

"जानावती।"

"यहां से कितनी दूर होगा ?"

"कोई चार मील।"

"जल्दी चलो।"

जिस वक्त चार आदमियों ने मिलकर इश्तियाक को पहली मंजिल से नीचे उतारा, उस वक्त हल्की-हल्की-सी बारिश हो रही थी। सड़क के किनारे-किनारे रोशनी के कुमकुमे पानी में भीगे हुए यों सिर झुकाए खड़े थे जैसे अपनी जर्दरू जिन्दगी पर .रो रहे हों। भीगी हुई सड़क पर कहीं-कहीं रोशनी के फटे चीथड़े नजर आते। फिर अंधेरा उन्हें खा जाता। फिर तगो-तारीक गड्ढों की मारी हुई एक सड़क पर कार यों लड़खड़ाकर चलने लगी जैसे एक औरत अपनी इस्मत लुटाकर रात की ओट में अपने घर की तरफ भाग रही हो।

ए फार्म भरो।

बी फार्म भरो।

सी फार्म भरो।

जिन्दगी तुम भी तो रुको !

इत्तियाक का सिर भूरे रंग के आयल क्लाथ के गद्दे पर टिका है। उसकी आंखें गहरे गड्ढे में जा गिरी हैं और उनपर यादों का ट्रक घू-घू करता हुआ चल रहा है।

पिचहत्तर रुपये एडवान्स लाओ।

यह रसीद लो।

बिट्टन ! मरीज को कमरा नम्बर सात में ले जाओ ऊपर लिफ्ट से। मैं अभी डाक्टर कोठारी को फोन करता हूं।

बाहर से कोई ट्रक गुजरता है।

घूं-घू !

इत्तियाक का सीना हौंकता है—

हूं···हू···!

आयल क्लाथ का भूरा बिस्तर अपने पायों में लगी हुई रबड़ की पहियों के जरिये लिफ्ट की जानिब हरकत करने लगता है। लिफ्ट ऊपर की मंजिल पर आके रुक जाती है। बिस्तर बरामदे में से गुजर रहा है। कमरा नम्बर सात के अंदर जाता है। एक डाक्टर और दो नर्सें अंदर आती हैं। सात नम्बर का पर्दा गिरा दिया जाता है और हम बाहर बैठ जाते हैं।

लम्बे कोरीडोर में बेआवाज नर्सें खामोशी से घूम रही हैं। अर्दली नीमगनूदगी में बेजार टहल रहे हैं। कहीं कोई हौले-हौले कराहता है, कोई धीरे-धीरे सिसकता है।

"इत्तियाक ने जहर क्यों खाया ?" मैं पूछता हूं।

"गबन किया होगा ?" नुसरत का छोटा भाई अंदाजा लगाके

कहता है, "बहन ने छोटे-मोटे घर का सारा [illegible] इश्तियाक
के सुपुर्द कर दिया था। हर वक्त भाग-भाग भी करते इश्तियाक की
के रहते थे। जब बहन ने इश्तियाक से निकाह देने को कहा
[illegible] उसने जहर खा लिया। मेरा ख्याल है कि…"

"तुम्हारा ख्याल गलत है," मुनीम का दूसरा भाई बोल
"इश्तियाक में इस मुहब्बत की खबर और नहीं है। आज तक उस
एक पैसे की चोरी नहीं की। मेरे ख्याल में पिछले दिनों जो मुरा
बाद से उसे इत्तला मिली थी कि उसके आबाई मकान वाले मुक
का फैसला उसके खिलाफ हुआ है, उसका गम उसे बहुत हुआ है

"अजी नहीं," बुड्ढा हामिद अपनी घनी भौंवों को सिकोड़
बोला, "इश्तियाक को मकान-दुकान, रुपये-पैसे से कुछ मुहब्
नहीं रही। यह उस लौंडिया का चक्कर है…गुलशन का।"

"गुलशन ?" मेरे कान खड़े हुए। गुलशन कौन है ? मेरे जे
में एक बिल्ली कूदने लगी…"

"एक नई आया रखी है साहब ने। बड़ी बदसूरत लौंडिया
मगर सोलह-सत्तरह बरस की है। भाग-भाग के काम करती
उसका नाम गुलशन है, और साहब हमने सुना है कि इश्तियाक
पहली बीवी का नाम भी गुलशन था।"

"अरे !" मैं चौंक गया।

"जी हां, उसी लौंडिया के चक्कर में जहर खा लिया है।"

"वह कैसे ?"

"पहले तो साहब से कहता रहा कि इस लड़की को निकाल दें
यह काम ठीक से नहीं करती है। फिर एक दिन मुझसे कहने ल
कि मैं इस वजह से इसे निकलवाना चाहता हूं कि इसका नाम गुलश
है। मैंने कहा—भले मानस, इसका नाम गुलशन है तो क्या हुआ
काम तो ठीक करती है। मगर इश्तियाक नहीं माना; बराबर उसक

शिकायत करता रहा। मगर जब साहब किसी तरह नहीं माने, तो साहब हमको तो मालूम नहीं कब उसने—इश्तियाक मिया ने—रवैया बदल दिया। अब यह उस लड़की पर मेहरबान होने लगा। दूसरे नौकर तो चाय पीते थे, यह उसको कॉफी पिलाने लगा जो सिर्फ साहब और बेगम साहब पीती हैं। फिर एक दिन गुलशन को जो पता चला कि उसको कॉफी मिलती है जबकि दूसरे नौकरों को सिर्फ चाय मिलती है, तो वह एकदम बिदक गई और उसने उस दिन से कॉफी पीने से इन्कार कर दिया। एक दिन उसने इश्तियाक को बाजार से देसी साबुन लाने को कहा, तो यह उसके लिए अंग्रेजी साबुन ले आया। उसने खोपड़े का तेल मांगा, तो यह गुलज़ार हेयर आयल नम्बर वन' उठा लाया। कल गुलशन की मां का खत आया जो बेगम साहब ने पढ़कर सुनाया। अब इश्तियाक की तो आदत है, दरवाजे पर खड़ा चोरों की तरह सुनता रहता है। गुलशन की मां ने लिखा था कि उसने गुलशन की शादी की बातचीत पक्की कर ली है। लड़का किसी सीमेण्ट कम्पनी में दरबान है और यह महज़ बावर्ची है, वह इसे क्या मुंह लगाती! बस जब से यह सुना, किचिन में बैठा-बैठा ठंडी सांसें भरता था और मुझसे कहता था—अब जीना बेकार है। मैंने पूछा—क्या हुआ? बोला—कुछ नहीं और फिर अपने सीने पर हाथ मारकर बोला—मगर अब जीना बेकार है। यह आज दोपहर की बात है ''रात को उसने जहर खा लिया···" हामिद इतना कहकर चुप हो गया।

मैंने चन्द पलों की खामोशी के बाद पूछा, "मगर जहर खाने से पहले इस कमबख्त ने लड़की से कोई बात नहीं की?"

"बिलकुल नहीं साहब।" हामिद सफा होकर बोला, "बिलकुल एकतरफा इश्क था। दस दिन तो हुए हैं गुलशन को आए हुए।

इन दस दिनों में उसने उस लड़की से नफरत भी की, दोस्ती की इच्छा भी की, मुहब्बत भी की, फिर आप ही आप मर भी गया। सब कुछ दस दिनों में कर लिया। लड़की को तो कुछ खबर भी नहीं है साहब। वह तो ऐसी बदसूरत है और ऐसी भेजे की खाली है कि उसे तो गुमान तक नहीं गुजर सकता कि कोई उससे इश्क कर सकता है।"

शायद चूंकि बूढ़ा था और जिन्दगी के उस दौर में से गुजर रहा था जब कोई किसी से मुहब्बत नहीं कर सकता, इसलिए दास्तान सुनाते वक्त उसके लहजे की शदीद तलखी जिस तरह उसकी मजबूरी प्रकट कर रही थी उससे मुझे बड़ा लुत्फ आया।

कोई साढ़े छः बजे के करीब डाक्टर कोठारी कमरा नंबर सात से बरामद हुए और मुझे देखकर बोले, "अभी कुछ कहा नहीं जा सकता, मगर अगले चौबीस घंटे उसपर बहुत नाजुक हैं। मैंने उसका मेदा साफ कर दिया है। ग्लूकोज के सेलाइन पर रख दिया है। खाने को दवा दे दी है। इंजेक्शन कुछ दे दिए हैं—कुछ लिख दिए हैं।"

"शुक्रिया डाक्टर साहब, मगर क्या मरीज इस वक्त होश में है ?" मैंने पूछा।

"होश में तो है, मगर अभी बहुत कमजोर है। अभी ज्यादा लोग उससे न मिलें तो बेहतर होगा।" डाक्टर ने मेरी तरफ इशारा करते हुए कहा, "सिर्फ आप उससे चन्द मिनट के लिए मिल लें। मैंने थाने में टेलीफोन कर दिया है। किसी वक्त भी पुलिस इन्स्पेक्टर उसका बयान लेने के लिए आ सकता है, क्योंकि मरीज की हालत बहुत नाजुक है···।"

इतना कहकर डाक्टर कोठारी चले गए, तो नुसरत का छोटा भाई गुस्से में भरकर बोला, "खां साहब घर पर नहीं हैं और यहां पुलिस के सामने जाने किस-किसके बयान होंगे ! उल्लू के पट्ठे को इतनी अक्ल नहीं आई कि अगर मरना ही था, तो समन्दर में

डूबके मर जाता, किसी गाड़ी के नीचे आकर मर जाता, कहीं पर मरता, मगर हमारे घर से दूर रहकर मरता और यों हम सबको परेशान करके तो न मरता।"

"बजा फरमाया आपने," मैंने कहा, "मरने वालों को हमेशा अपने बाद जिन्दा रहने वालों की सहूलियत का ख्याल करके मरना चाहिए। इस सिलसिले में अगर आप एक 'खुदकुशी गाइड' पब्लिश करें, तो बहुतों का भला होगा!" इतना कहकर मैं कमरा नम्बर पाँच में दाखिल हो गया।

इत्तफाक से उस वक्त कमरे में कोई नहीं था। नर्स कोई दवा लाने के लिए नीचे गई थी। इश्तियाक गहरे तकियों में सिर टिकाए लेटा था। उसके दायें बाजू की रग में सेलाइन जा रहा था। दूसरा बाजू उसके सीने पर था। उसकी आंखें बन्द थीं। उसके स्याह चेहरे के पीछे सफेद तकियों से परे खिड़की पर बारिश के कतरे लरज रहे थे और कांच की सतह पर रोशनी और साये आशा और निराशा के द्वन्द्व की तरह कम्पायमान थे…!

"इश्तियाक!" मैंने उसके बिस्तर के करीब जाकर सरगोशी में कहा। "इश्तियाक, सुनो।" मैंने फिर ज़रा ऊंची सरगोशी में कहा, "कान खोलके सुनो, मेरे पास ज्यादा वक्त नहीं है, नर्स आ रही है।"

इश्तियाक ने आंखें खोलीं और जब मैंने देखा कि उसने मुझे पहचान लिया है तो मैंने उसके करीब झुककर कहा, "किसी वक्त भी पुलिस इन्स्पेक्टर तुम्हारे पास बयान कलमबन्द करने आ जाएगा। उसमें सिर्फ यही कहना होगा कि तुम्हारे पेट में दर्द था और तुम अमृतधारा लेकर सो गए थे किचिन में। इत्तफाक से तुम्हारे सिरहाने टिक-टुअण्टी की शीशी पड़ी थी। वह भी इतनी ही बड़ी होती है जितनी अमृतधारा की। इस लिए रात को जब तुम्हारे पेट का दर्द

चन्दन-हार

यूकलिप्टस के कुंज के पास पहुंचकर जालिमसिंह रुक गया और अपने सर पर ट्रंक और पीठ पर बिस्तर और कन्धे पर राइफल उठाए हुए उसने एक पल के लिए रुककर चारों ओर देखा।

वह चार हजार फुट की चढ़ाई चढ़कर आया था। उसकी नजरों के नीचे पहाड़ी घाटियां और ढलानें गिरती जा रही थीं और चीड़ों से भरे हुए जंगल फिसलते जा रहे थे और सबसे परे सोन की चमकीली नदी किसीकी बल खाती हुई चोटी के समान घाटी की कमर पर उतरती जा रही थी।

जालिमसिंह ने मुस्कराकर इतमीनान का सांस लिया। यह दृश्य उसका बरसों का देखाभाला था। हाथ की रेखाओं के समान वह इसके एक-एक नक्श को जानता था। नथुने खोलकर उसने अपने देश की हवाओं को सूंघा और उसके नथुनों में चीड़ के जीगन और यूकलिप्टस की इलायचियों की सुगन्ध बस गई और उसने मुंह खोलकर ठंडा, ताजा और कोमल समीर से दो-तीन बार पूरी तरह अपने फेफड़ों को भर लिया।

फिर उसने अपने सर से लोहे का काला ट्रंक उतारा जिसपर सफेद अक्षरों में 'सूबेदार जालिमसिंह' लिखा हुआ था। ट्रंक उतार-कर उसने नीचे ज़मीन पर रख दिया। पीठ हिलाकर बिस्तर को नीचे गिरा दिया, फिर कंधे से राइफल को सावधानी से उतारकर

एक चट्टान से टिका दिया और खुद बड़े-बड़े फौजी बूटों से शोर मचाता हुआ यूकलिप्टस के कुंज के अन्दर बहने वाले सोते की ओर चला गया।

उसके क़दमों से कई छोटे-छोटे पत्थर उछलकर लुढ़के और लुढ़ककर गुड़ुप की आवाज़ पैदा करते हुए सोते मे गिर गए। वह सोते के किनारे नर्म, हरी, रेशमी दूब पर लेट गया जिस तरह वह बचपन मे इस सोते के किनारे लेटा करता था। फिर उसने धूप की जलन से जलते हुए तांबे के रग जैसे गालों को सोते के पानी से धोया—पहले उसने दायें गाल को पानी की सतह पर रखा—उसे ऐसा लगा जैसे ठंडी मलाई की कई परतें उसके गाल से छू रही हैं। फिर उसने बायें गाल को पानी से ठडा किया—फिर एक गहरी खुशी के विचार से उसने अपना पूरा चेहरा पानी में डुबो दिया और देर तक वह सास रोके, आखें खोले पानी की तह में उबलने वाली रेत और धीरे-धीरे कांपने वाले फिरन के चमकीले पत्तों को देखता रहा। यहा तक कि पानी की ठडक उसके दिल तक उतर गई।

फिर पानी के धारों मे अपनी सास के स्वच्छ बुलबुले छोड़ता हुआ वह सोते से अपना चेहरा निकालकर कुहनियों का सहारा लेकर उठ बैठा। यूकलिप्टस की एक डाली पर बैठे हुए कव्वे ने ज़ोर से कांव-कांव की। ज़ालिमसिंह चौंक गया—उसने अपने करीब से एक पत्थर उठाकर कव्वे की ओर ज़ोर से मारा। कव्वा कांव-कांव करता हुआ उड़ गया। ज़ालिमसिंह अपने-आप हसने लगा।

शायद उसके घर की मुडेर पर कोई कव्वा इस वक्त बैठा हुआ इसी तरह कांव-कांव करता हुआ करतारो को आने वाले मेहमान के शुभागमन का सदेश दे रहा होगा। वह तीन साल के बाद अपने घर लौट रहा था। उसने करतारो को खत लिख दिया था और इस वक्त जिस धड़कते हुए दिल से वह करतारो तक पहुंचने का

इंतजार कर रहा था, उसी धड़कते हुए दिल से उसकी प्यारी बीवी भी उसका इन्तजार कर रही होगी !

तीन साल पहले जब वह करतारो से विदा होकर गया था तो इसी यूकलिप्टस के कुंज तक उसकी बीवी उसे छोड़ने के लिए आई थी, और जो कपड़े वह उस समय पहने हुए थी, उन्हीं कपड़ों में जालिमसिंह इस वक्त करतारो को अपने विचारों में उभरता हुआ देख रहा था। करतारो का बूटा-सा कद, सुडौल यूकलिप्टस की डाली के समान और पतले-तीखे नाजुक नख-शिख और नीली साटन की लम्बी फूलदार कमीज में उसकी कमर लचकती हुई और कूल्हे डोलते हुए। अचानक रक्त बड़े जोर से उसकी नाड़ियों में बजने लगा। उसकी गूंज उसके कानों में इतनी ऊंची थी मानो आसपास के पहाड़ों की घाटियां और ढलानें और वादियां उसके खून की गूंज से भर गई थीं। वह करतारो तक पहुंचने का इन्तजार बड़ी मुश्किल से कर सकता था जबकि घर अब बहुत दूर न था। यूकलिप्टस के कुंज से परे आधे कोस के अन्तर पर टक्की की ओट में था—मगर वहां तक पहुंचने का इन्तजार कौन करे···ऐसे अवसरों के लिए हैलीकाप्टर होना चाहिए। हैलीकाप्टर को उड़ाते हुए वह उसे सीधा अपने घर की छत पर उतार सकता था और गर्वित भाव से दोनों बांहें फैलाकर करतारो को आवाज़ दे सकता था :

'माखियों···मैं आ गया !'

वह करतारो को प्यार से 'माखियों' कहता था जिसका अर्थ पहाड़ी भाषा में 'शहद' होता है। उसकी करतारो वास्तव में शहद के समान मीठी थी और ऐसे ही नर्म और घुलने वाली और ऐसे ही सुनहरी रंगत वाली। उसकी आवाज़ सुनकर घर के आंगन में काम करने वाली करतारो कैसी हैरत से चौंक जाती और सिर उठाकर अपनी बड़ी-बड़ी सोते के समान चमकीली आंखों से उसकी ओर

जागने लग जाती और मुंह से कुछ बोल न सकती और वह घर की छत से छलांग लगाकर नीचे आंगन में कूद पड़ता और करतारो को अपने सीने से लगा लेता।

खून इतने जोर से गूंजने लगा था और गाल किसी अन्दरूनी गर्मी से ऐसे तमतमा रहे थे जैसे किसीने तावे को आग पर रख दिया हो। जालिमसिंह ने जल्दी-जल्दी ओक में पानी भरकर अपने चेहरे पर फेंका, दो-तीन-चार बार'''जब सोते के बर्फीले पानी के स्पर्श से उसका चेहरा फिर ठंडा हुआ तो वह एकदम सोते के किनारे खड़ा हो गया और पलटकर उसने चट्टान से टिकी हुई राइफल को अपने कंधे पर लटका लिया, बिस्तर को अपनी पीठ पर लाद लिया और काले ट्रंक को उठाकर, जिसमें उसके कपड़े और करतारो और चन्दन के लिए उपहार भरे हुए थे, अपने सर पर लाद लिया और फिर तेज-तेज कदमों से अपने गांव की ओर चल पड़ा।

रास्ते-भर वह प्रार्थना करता रहा कि रास्ते में उसे कोई न मिले। करतारो को देखने से पहले वह अपने गांव के किसी आदमी से नहीं मिलना चाहता था। वह तीन साल के बाद अपने गांव आ रहा था। वह अच्छी तरह जानता था कि अगर रास्ते में गांव का आदमी मिल गया तो वह पहले तो उससे पांच मिनट तक गले मिलता रहेगा, फिर कन्धे पर हाथ मारते हुए उसका हालचाल पूछता रहेगा, फिर चहकती हुई आवाज में खेतों में काम करते हुए अपने दूसरे साथियों' को बुलावे पर बुलावा देगा—'ओ बतासिंहा, ओ मुहम्मद ... , ओ कादरे, ओए पेड़ा राम—सूर दे पुत्र—देख कौन आया —अपना गिराईं (गांव वाला) सूबेदार-मेजर जालिमसिंह'''। ... वह होगा कि वह गांव की सीमा में दाखिल होकर भी तीन ... पहले अपने घर न पहुंच सकेगा'''क्या ऐसा नहीं हो सकता ... गांव के लोग, उसकी करतारो और उसके भाई चन्दनसिंह

के लिया, मर जाएं···कुछ पल के लिए···या सो जाएं या अंधे हो जाएं ? कुछ मिनटों के लिए, बस कुछ मिनटों के लिए···और जब उसने सोचा कि ऐसा किसी तरह नहीं हो सकता तो उसने चलते चलते अपना रास्ता बदल दिया।

वह तारस नाले में घुस गया जो गांव के पिछवाड़े ढक्की के नीचे एक खतरनाक ढलान पर बहता था। ढक्की के ऊपर गांव था···गांव से परे दूसरी ओर की हरी-भरी ढलानों पर खेत थे··· मगर यहां से वह किसीको न देख सकता था और न कोई उसे देख सकता था क्योंकि गांव ऊपर ढक्की पर आबाद था और वह तारस नाले के किनारे-किनारे जंगली अखरोटों के घनेरे सायों में चल रहा था और बड़ी सावधानी से कदम उठा रहा था, क्योंकि ढलान बहुत खतरनाक थी और यहां से गांव तक जाने का कोई रास्ता न था मगर वह एक रास्ता जानता था—बचपन का रास्ता—फिसलवां चट्टानों से गुजरता हुआ एक खतरनाक रास्ता जिसे केवल बकरियां इस्तेमाल करती थीं या कभी-कभी गांव के बच्चे सबकी नजरों से छिपकर गिरते-पड़ते फिसलते हुए नीचे तारस नाले के किनारे अखरोटों के जंगल में पहुंच जाते थे और अखरोट तोड़-तोड़कर खाते थे यह रास्ता बिलकुल उसके घर के पीछे से निकलता था।

इस रास्ते पर चलते हुए न वह गांव के किसी आदमी की नजर में आ सकेगा, बल्कि स्वयं करतारो को भी बहुत पहले उसके आने की खबर न होगी और वह केवल उसी वक्त उसे देख सकेगी जब वह घर के दरवाजे पर खड़ा होकर आंगन में आवाज़ देगा :

'माखियों !'

चलते-चलते वह अचानक सहम गया और सहमकर खड़ा हो गया—उसके रास्ते में दो नीली चट्टानों के बीच उगे हुए अखरोट के एक पेड़ पर दो लड़के बैठे थे और अखरोट तोड़ते हुए रुक गए थे

और आश्चर्य से उसकी शानदार वर्दी और उसकी चमकती हुई राइफल को देख रहे थे। कुछ मिनटों में ये बच्चे बकरियों की तरह उछलते-कूदते, चट्टानों को छलांगते ऊपर ढक्की पर पहुंच जाएंगे और चिल्ला-चिल्लाकर उसके आगमन का ऐलान कर देंगे!

उसने हाथ के इशारे से उन दोनों लड़कों को नीचे उतरने का इशारा किया। कुछ देर तक वे लड़के अखरोट की डाल पर निश्चल बैठे रहे, फिर उसके चेहरे की गम्भीरता देखकर सहमे हुए नीचे उतर आए।

ज़ालिमसिंह ने अपनी पतलून की जेब में हाथ डालकर सेलोफ़ोन के एक लिफ़ाफ़े में भरी हुई टाफ़ियां निकालीं···ये टाफ़ियां वह करतारो के लिए लाया था।

चार टाफ़ियां उसने उन लड़कों को देकर कहा, "लो!"

लड़के झिझके।

"लो," उसने सख़्ती से कहा, "अंग्रेज़ी मिठाई है।"

अंग्रेज़ी मिठाई का नाम सुनकर उन दोनों लड़कों के हाथ बढ़ गए।

ज़ालिमसिंह ने हाथ से राइफल को झलाकर कहा, "अगर तुमने किसीको बताया कि ज़ालिमसिंह गांव में आया है तो गोली मार दूंगा···समझ गए?"

भय और डर के कारण लड़कों की आंखों की सफ़ेदी फैलती मालूम हुई। उन्होंने धीरे-से सर हिलाया, मगर डर के मारे उनके गले से कोई आवाज़ न निकल सकी। ज़ालिमसिंह आगे बढ़ गया। आगे जाते-जाते मुस्कराने लगा···उसे मालूम था कि अब एक घंटे तक तो इन लड़कों की हिम्मत न होगी कि ऊपर ढक्की पर जा सकें···उसे मालूम था कि लड़के अब भी उस अखरोट के पेड़ के नीचे खड़े-खड़े उसे ताक रहे हैं···मगर उसने पलटकर देखना उचित न समझा,

नहीं तो शायद डर का प्रभाव टूट जाता···वह मुस्कराते हुए आगे बढ़ता गया और बिलकुल उस चट्टान पर जा पहुंचा जिसके ऊपर चढ़कर वह सीधा अपने घर के पिछवाड़े पहुंच सकता था।

यहां पर लगभग कोई रास्ता न था। मालूम होता था बहुत दिनों से किसीने इस रास्ते को इस्तेमाल नहीं किया है या बच्चों ने सीधे नारंग नाले तक पहुंचने का कोई दूसरा सरल रास्ता खोज लिया है।

यहां पर ऊंची-ऊंची चट्टानें थीं और जमीन बहुत फिसलवां थी। जगह-जगह सौंफ की झाड़ियां थीं और बेरियों की झाड़ियां, ऊदी बेरियां, लाल बेरियां, चिट्टी बेरियां और बादाम-बेरियां जिनका रंग बादाम की तरह हल्का पीला होता है लेकिन जो स्वाद में सबसे मीठी होती हैं। तीन साल से उसने बादाम-बेरियां नहीं चखी थीं। तीन साल से वह करतारो के होंठों के स्वाद से अपरिचित था। रास्ते-भर ऊपर चढ़ते-चढ़ते बादाम-बेरियां चखते-चखते क्यों उसके विचारों में करतारो बार-बार आ जाती थी और उसके हरएक विचारों में गडमड हो जाती थी?

उसने अपने कदम तेज़ कर दिए।

चढ़ाई का अन्तिम भाग उसने बड़ी मुश्किल से तय किया—यहां फौजी जानकारी उसके काम आई थी। बिलकुल अंतिम चट्टान पर पहुंचने के लिए कोई रास्ता न था। जहां पर वह खड़ा था उस जगह और ऊपर की चट्टान तक के बीच के फासले में केवल पौन गज़ का अन्तर था। लेकिन वह ऊपर तक कैसे पहुंचे—इस बोझ को लिए हुए?···

उसने बड़ी सावधानी से अपने दोनों हाथों में ट्रंक को सर से उठाकर ऊपर किया और दोनों बांहें उठाकर और एड़ियां उठाकर अपने शरीर की पूरी ताकत से ट्रंक को ऊपर की चट्टान पर धकेल

देता, फिर एकदम छलांग लगाकर जो वह उछला तो उसकी दोनों
बाहें ऊपर की चट्टान पर जम गईं और बाकी का शरीर नीचे हवा
में लटकने लगा। उसने ज़ोर लगाकर बंदर के समान लहराकर जो
उछाल मारी तो हारीज़ेंटल बार के समान चट्टान को इस्तेमाल
करते हुए झूलकर ऊपर कूद गया।

ऊपर कूदते हुए लम्बी-लम्बी घास ने उसे अपनी गोद में ले
लिया। यह घास घर के पिछवाड़े में उगी हुई थी। इस घास में
अपने-आप उगने वाली भांग के पौधे थे और पोस्त के पौधे और
कहीं-कहीं सौंफ की झाड़ियां और लौकी की बेलें छत से ज़मीन तक
फैली हुई थीं और उनके बड़े-बड़े पत्तों से एक विचित्र कड़वी-सी महक
आती थी जो उसे इस वक्त बड़ी अच्छी मालूम हुई। कुछ समय तक
वह घास पर खामोशी से लेटा रहा'''खामोशी'''

खुला था और दरवाज़े के चौखटे में दूर अन्दर छते हुए
बरामदे में के एक कोने में चूल्हे के पास बैठी हुई करतारो उसे नज़र
आ गई—लेकिन करतारो उसे न देख सकी क्योंकि उसकी पीठ
कालिमसिंह की ओर थी। मगर वह करतारो के उलझे हुए बाल देख
सकता था और लहराती हुई चोटी और ऊदे रंग के फूलों की कासनी
सलवार और कमीज़ और उसके भरे-भरे हाथों में कुहनियों के पास
... में तरते हुए मानो उसकी आंखों में
... सावधानी से ट्रंक को अपने
... के अंदर एक
... होशियारी

से झुककर दबे पांव बरामदे की ओर बढ़ने लगा ।

मगर उसके बूट फौजी थे इसलिए कुछ कदम चलकर ही वह आंगन की मिट्टी में दबे हुए किसी पत्थर से लगकर बज उठे और करतारो ने चौंककर और मुड़कर एक पल के लिए पीछे देखा और देखते ही उसका चेहरा भास हो गया जैसे एकदम लालिमा के लाल बादलों ने उसके चेहरे पर अपना रंगीन आंचल डाल दिया हो…वह बैठी-बैठी और झुक गई और मुंह मोड़कर उसने अपना चेहरा अपने घुटनों में छिपा लिया ।

दो-तीन लम्बे-लम्बे डग भरते हुए ज़ालिमसिंह ने करतारो को जा लिया और उसे अपनी दोनों बांहों में उठाकर अपने सीने से लगा लिया और करतारो का दम रुकने लगा और हंडिया में चलने वाली डोई उसके हाथ से गिर गई और वह अपने पति के सीने से लगी-लगी सिसकने लगी ।

काफी समय बीत जाने के बाद जब ज़ालिमसिंह के सीने की धमक कुछ कम हुई तो उसने उसी तरह आंगन में खड़े-खड़े करतारो को अपने सीने से लिपटाए हुए प्रश्न किया :

"चन्दन कहां है ?"

ज़ालिमसिंह को अब अपने भाई की याद आई थी !

जवाब में करतारो कुछ न बोली, केवल ज़ालिमसिंह ने इतना अनुभव किया कि जैसे करतारो का शरीर एक बार ज़ोर से लरज-कर कांपा, फिर उसके हाथों में बर्फ के समान ठंडा हो गया ।

"बात क्या है ? बोलती क्यों नहीं ? चंदनसिंह कहां है ?…" ज़ालिमसिंह ने करतारो को अपने सीने से अलग करने की चेष्टा करते हुए पूछा ।

लेकिन करतारो उसके सीने से नहीं हटी, और भी ज़ोर से चिमट गई और मुंह छिपाकर बिलखने लगी ।

"बात क्या है, करतारो ? बताती क्यों नहीं हो ? क्या चन्दनसिंह मर गया है ?"

कोई जवाब दिए बिना करतारो ने धीरे से इन्कार में सर हिलाया।

"फिर क्या किसी दूसरे गांव गया है ?"

करतारो ने फिर इन्कार में सर हिलाया।

"फिर कहां है वह ?" जालिमसिंह ने ज़रा सख्ती से पूछा।

"तुम्हारे आने का समाचार सुनकर भाग गया है," करतारो सिसकियों के बीच बोली। अब उसकी पतली-पतली गुलाबी उंगलियां जालिमसिंह के सीने को टटोल रही थीं।

"भाग गया है ! क्यों ?" जालिमसिंह की समझ में कुछ न आया। चन्दन उसका छोटा भाई था—मां-बाप मर चुके थे इसलिए जालिमसिंह, चन्दनसिंह को अपना भाई ही नहीं अपना बेटा भी समझता था। बड़े लाड़ और चाव से उसने चन्दनसिंह की परवरिश की थी और दोनों भाइयों में बहुत प्यार था, इसलिए जालिमसिंह की समझ में कुछ न आया कि करतारो क्या कह रही है।

करतारो का चेहरा सरक-सरककर ऊपर उठा और उसके कान तक पहुंच गया। करतारो के होंठ उसके कान से आ लगे और उसकी गर्म-गर्म सांस की भाप जालिमसिंह को बहुत अच्छी मालूम हुई। करतारो धीरे-धीरे सिसकियों के बीच जालिमसिंह के कान में कुछ कहने लगी। कुछ पल के बाद जालिमसिंह ने करतारो को ऐसे अपनी गोद से गिरा दिया जैसे अब तक वह किसी सांप को अपने सीने से लगाए हुए था।

वह फटी-फटी नज़रों से करतारो की ओर देखने लगा। उसका खून अन्दर ही अन्दर बर्फ के समान जमने लगा। उसका दम घुटने लगा—ऐसा लगा जैसे किसी ने उसके कंठ में बर्फ का टुकड़ा रख

[illegible] कोई बात [illegible]

[illegible]

[illegible] दो-तीन

[illegible] ओर उसी

[illegible] नहीं, मगर

[illegible]

[illegible] की ओर में पकड़ लिया,

[illegible] को पकड़ कर जमीन पर

[illegible] एक कुर्सी को

[illegible] बोला, "चल मेरे साथ।"

[illegible] और [illegible] बोली, "कहां

[illegible]

[illegible] पीछे पीछे चली आ।" जालिमसिंह

[illegible]

[illegible] से बाहर निकल गया।

[illegible] पीछे पीछे हो ली।

[illegible] बकरियां चर रही थीं और एक

[illegible]। जालिमसिंह ने पहचान लिया—

[illegible]

[illegible] ने जोर से पुकारा।

[illegible] को पहचानकर तीर की सी तीव्रता से भागा

[illegible] छलांग में जो उछला तो जालिमसिंह के

[illegible] जालिमसिंह ने उसे केवल एक पल के लिए अपने

[illegible] दिया, फिर इन्दू को हटाकर वह करतारो से कहने

लगा, "चन्दनसिंह का कोई कपड़ा घर पर हो तो कुत्ते को सुघाने के लिए लेकर आओ'''वैसे मैं जानता हूं कि वह भागकर कहां गया होगा'''मगर अपना कुत्ता भी सहायता कर सकता है'''डब्बू बहुत होशियार है।"

दिन भर वे पहाड़ों और जंगलों में चलते रहे।

करतारो बार-बार थक जाती और बार-बार जालिमसिंह को अपनी कमजोर आवाज और विवश स्वर में कुछ इस तरह वापस घर जाने के लिए कहती कि जालिमसिंह का गुस्सा दूना हो जाता और वह बड़ी सख्ती से उसे डांट देता और आगे बढ़ जाता। डब्बू ने भी कुछ गन्ध पा ली थी और अब वह बड़ी खुशी से आगे-आगे झाड़ियों के चारों ओर घूमता हुआ पेड़ों के तनों को और रास्ते में आने वाली चट्टानों के चारों ओर उगी हुई घास को सूंघता हुआ आगे-आगे चल रहा था और उसकी आंखों में ऐसी खुशी की चमक थी जैसे वह अपने भाई चन्दन से मिलने जा रहा हो। डब्बू चन्दन से बहुत प्यार करता था और जल्द से जल्द उसके पास पहुंचना चाहता था।

"वहीं गया है," आगे-आगे तेजी से दौड़ने वाले डब्बू के रास्ते की सिम्त देखकर जालिमसिंह ने अन्दाजा लगाया। एक बार जालिमसिंह ने चन्दनसिंह को उसके लड़कपन में मारा था और मार खाकर चन्दनसिंह डर के मारे गांव से बाहर भाग गया था और चीड़ के जंगलों के ऊपर शाहपीर की चोटी पर चला गया था। इस चोटी पर लाखों बरसों की बर्फ ने घुल-घुलकर चट्टानों को नंगा कर दिया था और कुछ चट्टानों के अन्दर दरारें डाल-डालकर उनमें विचित्र-सी महराबें बना डाली थीं'''और एक बहुत बड़ी गुफा जहां बरसात और बर्फ के तूफानों में अचानक घिर जाने वाले चरवाहे अपने

मवेशियों-समेत आसरा लेते थे। दो दिन तक खोजने के बाद जालिमसिंह ने चन्दनसिंह को उसी गुफा में पाया था। वह और उसके साथ जब भी जालिमसिंह की किसी बात पर चन्दनसिंह से लड़ाई होती थी—चन्दनसिंह अक्सर उसी गुफा में जाकर आसरा लेता था, क्योंकि उसे मालूम था कि उसका भाई वहीं पर उसे मनाकर ले जाने के लिए आएगा।

तीसरे पहर के करीब वे जालपीर की चोटी पर पहुंच गए। यह जगह बहुत सुन्दर थी। दूर-दूर मीलों तक पहाड़ी सिलसिले उठते-गिरते गगन को चूमते नजर आते थे। चट्टानों की महराबें ऐसी सुन्दरता से कटी हुई थीं मानो बर्फ के हाथों से नहीं बल्कि इन्सानी हाथों ने उनका निर्माण किया हो…मगर जालिमसिंह की आंखें इस समय किसी सुन्दरता को न देख सकती थीं।

एक महराब के पास पहुंचकर डब्बू जोर से भौंकने लगा। जालिमसिंह ने अपने कंधे से राइफल उतार ली।

"क्या करते हो? क्या करते हो?" करतारो ने सिसककर कहा, "वह तुम्हारा भाई है—चन्दन!"

"मगर उसने मेरी इज्जत पर डाका डाला है," इतना कहकर जालिमसिंह ने करतारो को धक्का दिया और अपना दामन छुड़ाकर कुत्ते के पीछे भागने लगा।

कुत्ते की आवाज और कदमों की चाप सुनकर एक आदमी महराब के पीछे से निकला। उसकी नजरों में तीसरी पहर का सूरज था। माथा चौड़ा था, आंखें कंवल के समान खुली हुई…कोई बीस वर्ष का नौजवान…जालिमसिंह के समान ऊंचा पूरा कद…मगर जालिमसिंह के समान मजबूत नहीं बल्कि दुबला-पतला और किसी हद तक नाजुक। उसके खड़े होने के भाव में एक विचित्र-सा लोच था और कविता जैसे उसके अंग-अंग में घुली हुई थी। वह बहुत

सुन्दर था और उसकी सुन्दरता, जिसपर कभी जालिमसिंह को गर्व था, इस समय वही सुन्दरता जालिमसिंह को एक तमाचे के समान प्रतीत हुई···उसने राइफल सीधी कर ली।

"भइया !" दोनों बाहें खोलकर चन्दन चिल्लाया।

"वहीं खड़े रहो," जालिमसिंह ने कड़ककर कहा और निशाना साधा।

"भइया, मेरी सुनो !"

मगर चन्दनसिंह का मुंह खुलेका खुला रह गया। जालिमसिंह ने उसके दिल में गोली मार दी थी। एक पल के लिए चन्दन पत्थरों की नीली महराब तले निश्चल खड़ा रहा फिर चकराकर नीचे गिर पड़ा और एक पत्थर की सिल पर ठंडा हो गया।

राइफल की आवाज़ दूर-दूर तक पहाड़ों में गूंजी जैसे बारी-बारी भिन्न-भिन्न दिशाओं से राइफलें चल रही हों। दूर ऊपर आकाश में कोई चील चिल्लाई फिर चारों ओर गहरा सन्नाटा छा गया।

जालिमसिंह करतारो की ओर मुड़ा।

करतारो अपना फक् चेहरा लिए खड़ी थी। उसकी फटी-फटी आंखों में भय झांक रहा था और होंठ उसके ऐसे बेरंग थे जैसे किसी-ने उन होंठों का सारा खून चूस लिया हो।

जालिमसिंह ने उसके हाथ से कुदाल छीनकर कहा—"मैं नीचे कोई खड्ड खोदता हूं इसे गाड़ने के लिए तब तक तुम इस लाश को देखती रहो।"

करतारो कुछ नहीं बोली, न उसकी आंखों में एक आंसू था न उसके होंठों पर एक शब्द। वह खामोश वहीं की वहीं खड़ी रही और जब जालिमसिंह कुदाल हाथ में लिए चट्टानों पर छलांगता हुआ दूर कहीं नीचे चला गया और आंखों से ओझल हो गया, तो वह धीरे-धीरे डरती-डरती लाश के पास आई···देर तक उसे घूरती रही···

धीरे-धीरे उसके उदास चेहरे पर एक विचित्र-सी मुस्कराहट आई और वह धीरे से उसके कानों में बोली, "मुझे छुड़ाकर उस सुन्दरी शहजादी के पास जाना चाहते थे !...क्यों ?"

फिर वह वासना-भरी, कोमलता और खुशी, बेबस होकर चन्दन से लिपटाने लग गई। उसने उसका सर अपनी गोद में ले लिया। उसकी आँखों में आँसू बह निकले और उसने विवश होकर चन्दन के सर को अपने सीने से सटा लिया और बरबस उसके होंठों को चूमने लगी और कहने लगी, "अब तुम किसीके पास नहीं जा सकते...अब तुम मेरे हो गए...सदा के लिए मेरे चन्दन-हार...!"

मैं और रोबो

मैंने रोबो को बर्मिंघम से मंगाया था; क्योंकि बर्मिंघम का रोबो न्यूयार्क के रोबो से अधिक सुशील तथा सुगम्य होता है। बर्मिंघम का रोबो बात-बेबात 'यस-सर' कहेगा। परन्तु न्यूयार्क का रोबो सदैव 'हाई' कहकर सम्बोधन करता है। न्यूयार्क का रोबो आपसे शीघ्र ही परिचित हो जाता है किन्तु बर्मिंघम का रोबो स्वामी और दास के बीच अन्तर स्थापित रखता है। वास्तव में इन दोनों के बीच वही अन्तर है जो एक अंग्रेज और अमरीकी में होता है।

रोबो का कद पांच फुट साढ़े चार इंच है और मैं उसके कद को बिलकुल नपा-तुला समझता हूं, क्योंकि मुझे छोटे कद के नौकर पसन्द आते हैं। बड़े कद के लम्बे-चौड़े नौकर को देखकर मेरी सिट्टी गुम हो जाती है और मैं उससे किसी काम को कहते हुए डरता हूं। इसीलिए मैंने रोबो को बर्मिंघम से मंगाया है, क्योंकि यह आदमी स्वभाव का नेक, सुशील और आज्ञाकारी है। वफादार और नमक-हलाल है। अपने को बात नहीं करता। कभी छुट्टी नहीं लेता। कभी सिनेमा देखने की हठ नहीं करता। कभी काम से जी नहीं चुराता और कभी तनख्वाह नहीं मांगता। इस दुनिया में ऐसा नौकर कहां से मिलेगा!

रोबो दिन को मेरा सब काम करता है और रात को मेरी लेबोरेटरी की चौकीदारी करता है। रोबो दिन को सोता नहीं, रात

को सोना नहीं। वह न पानी पीता है, न भोजन करता है। ऐसा जान पड़ता है मानो वह लोहे का बना हो। बल्कि यों कहना चाहिए कि वास्तव में वह लोहे का बना हुआ है। पहली बार जब मैंने उसे लकड़ी के खोखे से बाहर निकाला, जिसपर 'मेड इन इंगलैंड' लिखा था, तो मैं उसके शरीर की फौलादी बनावट को देखकर बहुत खुश हुआ। रोबो फौलाद का बना हुआ है। हाथों की उंगलियों में क्रोमियम का पालिश है और टांगों में स्पंज की गद्दियों के अतिरिक्त ऐसे अच्छे स्प्रिंग लगे हुए हैं कि वह लगभग आहट पैदा किए बिना चल लेता है। रोबो के दिमाग में अनगिनत मकनातीसी फीते हैं, जिनमें मेरी व्यक्तिगत आवश्यकताओं और लेबॉरेट्री के काम के सम्बन्ध में तमाम आवश्यक आदेश दर्ज हैं। इन आदेशों के अतिरिक्त वह और कुछ नहीं जानता। उसके दिमाग में कोई दूसरा ज्ञान नहीं। उसके जीवन में कोई और अनुभव नहीं। हृदय में कोई भावना अथवा कोई अभिलाषा नहीं; क्योंकि रोबो के सीने में हृदय नाम की कोई चीज है ही नहीं। उसके अन्दर निरन्तर काम करने वाली एक बैटरी है। जिसकी बरमिंघम ऑटोमेटिक कम्पनी ने दस वर्ष की गारंटी दी है।

मेरी लेबॉरेट्री में तीन आदमी काम करते हैं। मैं, जिसे सब लोग प्रोफेसर कहते हैं। मेरी असिस्टेण्ट शीला, जो एकदम मूर्खा, बातूनी और चिड़चिड़े स्वभाव की लड़की है। यद्यपि अपने-आपको औरत कहती है, किन्तु एक पच्चीस वर्ष की लड़की को जो प्रतिदिन नये कपड़े पहनकर और लिपिस्टिक लगाकर आती हो, मैं किसी तरह औरत नहीं कह सकता। मैंने कई बार उसे अलग कर देने की धमकी दी है। परन्तु वह हर बार मेरी धमकी से प्रभावित होकर अपना छोटा-सा मुंह खोल देती है और ऐसे विचित्र भाव से मेरी ओर देखने लगती है कि उसकी बड़ी-बड़ी आंखें आंसुओं से भर जाती हैं और मुझे हर बार अपना निश्चय बदल देना पड़ता है। फिर-यह बात भी

है कि डांट खाकर वह ठीक हो जाती है और अपना काम सुरुचिपूर्ण ढंग से करने लगती है। मैंने यह देखा कि औरतें छोटी-छोटी बातों पर बहुत गहरी नज़र रखती हैं। जीवन के विस्तार को वे एक सम्पूर्ण साँचे में नहीं ढाल सकतीं। इसके विपरीत जीवन के अलग-अलग खानों पर उनकी नज़र ठीक काम करती है। शीला घण्टों खुर्दबीन पर बैठ सकती है जबकि मैं शीघ्र ही ऊब जाता हूं।

हमारा तीसरा साथी रोबो है जिसे मकनालीसी फीतों द्वारा कैन्सर रोग-सम्बन्धी अनुसंधान और परीक्षणों की विशेष रूप से शिक्षा दी गई है। कैन्सर का अभी तक कोई इलाज नहीं खोजा जा सका। और कभी-कभी, जैसे गेलोपिंग कैन्सर (Galloping Cancer) रोग की गिल्टियां इस तेज़ी से बढ़ती हैं कि उनके विकास की गति को पाने के लिए रोबो का मशीनी दिमाग सर्वोत्तम सिद्ध होता है और मुझे रोबो से इस काम में बड़ी सहायता मिलती है।

मैंने रोबो को सबसे पहले इसी काम के लिए मंगाया था। परन्तु अब वह मेरा बहुत-सा निजी काम भी कर देता है; क्योंकि शीला शाम के बाद अपने घर चली जाती है और मैं अपनी लेबॉरेट्री में अकेला होता हूं और कभी मुझे समय का अन्दाज़ा तक नहीं रहता, और मैं अपने घर में बिल्कुल अकेला होता हूं। इस दुनिया में मेरा कोई मां-बाप, भाई-बहन नहीं है। होंगे तो वे सब, परन्तु अब मुझे कुछ याद नहीं है। मैं कैंसर रोग-सम्बन्धी अनुसंधान में इतना डूब चुका हूं कि मेरे दिमाग में इसके अतिरिक्त और बात बाकी नहीं रही। कोई नाता शेष नहीं रहा। इस परिस्थिति में यदि रोबो मेरे पास न होता तो मेरी देखभाल कौन करता? तब तो मेरा जीवित रहना भी कठिन हो जाता। मैंने अपने जीवन की बहुत-सी ज़िम्मेदारियां रोबो के सर पर डाल दी हैं और रोबो निस्संदेह ही अपने-आपमें घोकस। वह कभी गलती नहीं करता। बस एक बार उससे एक भूल

हुई थी।

मुझे याद है, वसन्त का आरम्भ था। उस दिन मैं बहुत ज्यादा प्रसन्न था।

मैंने कैंसर की चिकित्सा पर एक नई दवाई का परीक्षण किया था। 'डेसिल सीक्वाईक्लाइड एन० टू० पी० के०' को लेकर उसके मिक्सचर में कैंसर के कीटाणुओं को रखे आज चार दिन बीत गए थे। प्रतिदिन कीटाणु बढ़ रहे थे। परन्तु आज अनायास ही उनका विकास रुक गया। यद्यपि अभी यह आखिरी बात नहीं थी, फिर भी सफलता की ओर मेरा यह एक और पग था।

मैंने प्रसन्न भाव से हथेलियां रगड़ते हुए रोबो से कहा, 'डेसिल सीक्वाईक्लाइड एन० टू० पी० के०' के मिक्सचर को पांच पाइंट तेज कर दो। और तुम शीला (उसके बाद मैंने शीला से मुड़कर कहा) इस मिक्सचर में कैंसर के कीटाणुओं को रखकर खुर्दबीन से जांचो और देखो क्या प्रभाव होता है?"

"बहुत अच्छा प्रोफेसर।" शीला खुर्दबीन से नजर उठाकर बोली और फिर एकाएक बाहर खिड़की पर उसकी दृष्टि पड़ गई और वह खुशी से चीख उठी।

"क्या है?" मैंने चौंककर पूछा, "कोई नया ख्याल?"

"फूल······" शीला चिल्लाकर बोली, "फूल खिले हैं, वह देखिए खिड़की के बाहर सेब की शाखों पर फूल खिले हैं।"

"रोबो, खिड़की बन्द कर दो।" मैंने रुष्ट स्वर में कहा।

"यस सर!" रोबो ने उठकर खिड़की बन्द कर दी।

"लेकिन प्रोफेसर," शीला विरोध करती हुई बोली, "आज पहली बार सेब की शाखों पर फूल खिले हैं। इसका मतलब यह है कि बहार आ गई।। हमें आज वसन्त-समारोह मनाना चाहिए।"

"तुम वह काम करो जो मैंने बताया है।" मैंने उसकी हद से

बड़ी हुई शोखी और बचपन पर गम्भीरता का पर्दा डालने का प्रयत्न करते हुए कहा, "वह 'डेसिल डीहाईड्राइड एन० टू० पी० के०'···"

"पीके हम जो आए···" शीला हकलाकर गाने लगी। और उसने मेरी बांहों में बाहें डाल दीं।

"चलो प्रोफेसर ! आज कहीं बाहर चलकर पिकनिक मनाएंगे। आज हम लेबॉरेट्री में काम नहीं करेंगे। बिलकुल नहीं करेंगे।" वह इठलाकर बोली।

मैं धैर्य खो बैठा था, पर बड़ी मुश्किल से अपने-आपपर काबू पाते हुए बोला, "अगर तुम्हारा काम करने को नहीं दिल चाहता तो लेबॉरेट्री से बाहर चली जाओ। रोबो के साथ शतरंज खेलो।"

[illegible] ाहिब को दूसरे कमरे में ले जाओ और इनके [illegible]

"न नहीं खेलूंगी रोबो के साथ शतरंज।" शीला इठलाकर बोली, "कमबख्त मुझे हमेशा हरा देता है। इसका मशीनी दिमाग पच्चीस बाजी आगे की सोच लेता है।"

मैंने रोबो को अपने पास बुलाया और उसके दिमाग में मकनातीसी फीते की सारी शक्ति छीनकर उस फीते पर शतरंज के बारे में साधारण और प्रारम्भिक जानकारी भर दी। और यह काम मिनटभर में हो गया। फिर मैंने रोबो को शीला के साथ बाहर भेज दिया। रोबो की समझ में कुछ नहीं आया। वह नहीं जान सका कि मैंने ऐसा क्यों किया। उसकी आंखों से काच के टुकड़ों के अन्दर हरी रोशनियां फैलकर चमकने लगीं। मगर जब उसकी समझ में कुछ नहीं आया तो वह अपने सर पर तांबे के घने तारों के जाल को हिलाता हुआ शीला को लेकर बाहर चला गया।

दो घण्टे बाद शीला जीत की खुशी से अपना चेहरा सुर्ख किए ंर भागी आई और मुझे ठीक उस समय अस्त-व्यस्त कर दिया

जब मैं 'डॉक्टर फीलॉसफी इन एम० ए० पी० के०'''मगर खैर, जाने दीजिए। शायद यह कि वह खुशी में भीगती हुई बोली:

"मैंने आज बोर्ड को साक्षात्कार में मात दे दी। उसका पच्चीस सालों का सोचने वाला दिमाग फेल हो गया। प्रोफेसर क्या तुम अब भी मुझे बधाई न दोगे?"

"अब माइक्रोस्कोप पर काम करोगी?" मैंने पूछा।

"माइक्रोस्कोप पर भी क्या, अब तो मैं माइक्रोफोन पर भी काम करने के लिए तैयार हूं।"

वह अपनी छोटी-सी लाल जीभ बाहर निकालकर बोली।

ज्यों-ज्यों सप्ताह के दिन बढ़ते जाते थे, शीला का स्वभाव कुछ अजीब-सा होता जाता था। अब वह ज्यादा शोख रंग के कपड़े पहनने लगी थी। कभी देर से आती कभी देर से जाती। कभी खुर्दबीन पर काम करते-करते एकाएक खिड़की खोलकर गहरी सांस लेती और बाहर देखने लगती। वह घण्टों बाहर देखती रहती। एक दिन मेरे लिए रेशमी स्कार्फ ले आई। अब मैं रेशमी स्कार्फ को लेकर क्या करता? कैन्सर की छानबीन में यह स्कार्फ भला मेरी क्या मदद कर सकता था? एक-दो बार उसने मेरे कोट में फूल भी टांकना चाहा, किन्तु मैंने उसे झिड़क दिया। कई बार वह अपने घर से मेरे लिए मीठा बनाकर लाई। कभी खीर, कभी शाही टुकड़े, कभी कोई पुडिंग, कभी कोई और अला-बला। जबकि वह अच्छी तरह जानती है कि मैं मीठा नहीं खाता, क्योंकि मुझे डायबिटीज की शिकायत है। मगर वह सुनती ही नहीं। एक बार जुकाम होने पर उसने मेरे लिए ऊनी स्वेटर बुन डाला, जबकि मौसम गर्मियों का था। भला मैं यह ऊनी स्वेटर कैसे पहन लेता? जब मैंने वापस किया तो उसने सारा स्वेटर उधेड़ डाला और अंगीठी

में फेंक दिया। अजीब पागल औरतें होती हैं ये भी ! उनके किसी काम की कोई तुक ही नहीं । किसी इरादे का कोई पता ही नहीं। किसी बात का कोई भरोसा ही नहीं। उन्हें किसी भी वैज्ञानिक काम के लिए शिक्षा देना बहुत कठिन है। ऐसे तमाम अवसरों पर खुद मेरे काम करने की व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाती है; और मेरे पास उस समय इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं होता कि जब शीला पर इस प्रकार का दौरा पड़े तो मैं उसे रोबो के हवाले कर दूं, क्योंकि रोबो ऐसे अवसरों पर भी बहुत उपयोगी और सफल व्यक्ति सिद्ध होता है। वह कभी शीला को शतरंज में उलझा लेता है; कभी बाहर बाग की सैर कराता है; कभी किसी पुस्तक से याद किए रोचक चुटकले शीला को सुनाता है, क्योंकि वह जानता है कि इन्सान हंसना बहुत पसन्द करते हैं। इसका कारण क्या है ? वह नहीं जानता। मैं भी नहीं जानता। परन्तु रोबो को इतना अवश्य ही मालूम है कि शीला चुटकलों पर बहुत हंसती है। इसलिए रोबो, शीला को इतना हंसा देता है कि वह गम्भीर हो जाती है और कुछ देर बाद लेबॉरेट्री में काम करने लगती है। हालांकि यह सब मुझे बहुत बुरा लगता है, मगर शीला अपने काम में बहुत कुशल है; और अच्छे लेबॉरेट्री असिस्टेण्ट कहां मिलते हैं ! रहा रोबो, वह फिर भी एक मशीन है। हर काम कर सकता है, परन्तु जिस काम में तनिक उपज और चिन्तन की आवश्यकता हो, वह काम उसे कैसे करने को दिया जा सकता है ?

एक बार तो मैं भी शीला के रवैये पर बहुत भन्ना गया। कम्बख्त एक दिन लेबॉरेट्री में खुशबू लगाकर चली आई। क्या आप सोच सकते हैं ? लेबॉरेट्री में खुशबू !

मैंने नथुने फुलाकर कहा, "यह क्या है ?

"खुशबू है।" शीला ने मुस्कराकर उत्तर दिया, "प्रोफेसर,

यह बिलकुल नया सा खुशबू है। मैं पेरिस से मंगाई है।"

"क्या तुम नहीं जानती कि लेबॉरेट्री में खुशबू लगाकर आना मना है ?"

"क्यों मना है ?" शीला ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखें आश्चर्य से उठाकर पूछा।

"क्योंकि हमें मालूम नहीं कि इस अजनबी खुशबू का कैन्सर के कीटाणुओं पर क्या प्रभाव पड़ता है।"

"आप तो मालूम करें।" शीला मेरे समीप आकर बोली, "बहुत दिलचस्प जानकारी होगी।"

"कैसी पागल हो तुम !" मैंने बिगड़कर कहा, "इस लेबॉरेट्री में इससे पूर्व ही कितनी ऐसी बातें हैं जिनके विषय में हम कुछ नहीं जानते। कैन्सर की बीमारी क्यों होती है ? इसकी गिल्टियां क्यों बढ़ती हैं ? किसी दवाई का उनपर कोई खास प्रभाव क्यों नहीं पड़ता ? उनके विकास की गति प्रोटीन के विकास की गति से अलग क्यों है ? इन समस्त रहस्यमय समस्याओं के होते हुए तुम इस लेबॉरेट्री में एक खुशबू की वृद्धि और करने आई हो। क्या तुम पागल तो नहीं हो गई हो।"

वह मेरे बिलकुल करीब आकर धीरे से बोली, "ज़रा सूंघकर तो देखो इस खुशबू को ! क्या कहती है यह तुमसे ?"

"गेट आउट !" मैंने क्रोध में भरकर कहा, "आज से तुम्हारी नौकरी खत्म है। रोबो, इसे लेबॉरेट्री से बाहर निकाल दो..."

इस घटना के दो दिन बाद रोबो लेबॉरेट्री में सिर झुकाए चुपचाप खड़ा था। उसका चेहरा कठोर और गम्भीर था, जैसे किसी गहरी सोच में लीन हो।

"क्या बात है, रोबो ?" मैंने पूछा।

"सर ! एक बात है।" वह झिझकते हुए बोला।

"हां हां कहो।" मैंने बढ़ावा दिया।

"सर ! मेरा जी नहीं लगता।"

मैंने चौंककर कहा, "जी नहीं लगता ! किसमें नहीं लगता ? हं ?"

"किसी काम मे जी नही लगता।" रोबो बोला।

"यह तुम क्या कह रहे हो ?" मैंने रोबो की ओर ध्यान से देखते हुए कहा।···"होश मे आओ, तुम जानते हो क्या कह रहे हो ?"

"इतनी बुद्धि तो मुझमें है कि जो कुछ मैं कह रहा हूं उसे समझ रहूं। सर ! जब से शीलाजी यहां से गई हैं, मेरा काम में जी नहीं लगता।"

"शीलाजी···!" मैंने चौंककर पूछा।

"यस सर !" रोबो ने गम्भीरता से कहा, "मैं नहीं जानता कि ऐसा क्यों है ! जब वे रोती हुई लेबरेट्री से बाहर जा रही थी तो मेरा जी चाहा कि मैं भी उनके पीछे-पीछे चला जाऊं। पर मैं तो फौलाद की एक मशीन हूं और आपने मुझे खरीदा है। मुझपर आपका अधिकार है। यही सोचकर मेरे पाव आगे न बढ़ सके और मैं सिर झुकाए वहीं का वहीं खड़ा रहा और चुपचाप उन्हें जाते देखता रहा। मैं नही कह सकता साहब, ऐसा क्यों हुआ ! मगर यह सच है कि उनके जाते ही मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे दिन का उजाला कम हो गया है, जैसे अंधेरा बढ़ चला है। मेरे दिमाग के तारों में एक विचित्र-सी सनसनाहट शुरू हो गई। ऐसी सनसनाहट जो बिजली की तरंग से सर्वथा भिन्न है। सर, एक बात आपसे कहूं ? यह सच है कि मै इसकी वैज्ञानिक वास्तविकता का कोई प्रमाण प्रस्तुत नही कर सकता, किंतु इतना कह सकता हूं कि शीलाजी

के हाथों में एक अजीब-सी शक्ति है, जो बिजली की शक्ति से बिलकुल अलग है। वे जब मेरे सिर पर हाथ फेरती थीं, तो मेरे तांबे के तारों में एक विचित्र-सी शान्ति और सुख की लहर दौड़ जाती थी। यह लहर बिजली की लहर से बिलकुल अलग है। साहब ! मैं इसका विश्लेषण नहीं कर सकता, क्योंकि मेरी जानकारी, मेरे ज्ञान, मेरी शिक्षा और मेरे जीवन में यह अनुभव बिलकुल नया है। एक दिन जब वे मेरे बालों में हाथ फेर रही थीं तो मैं पांच मिनट के लिए बिलकुल गायब हो गया था। गायब इस अर्थ में कि मुझे कुछ सुध ही न रही। मैं कहां था, कहां गया और क्या हो रहा है ? इन पांच मिनटों में समय मेरे लिए कहां चला गया था, इसका आज भी मेरे पास कोई उत्तर नहीं। दो दिन से मैं अपने-आपको खोया-खोया-सा अनुभव कर रहा हूं। मेरे शरीर की बैटरी ठीक चल रही है। वोल्टेज भी ठीक है। दिमाग के मकनातीसी फीते-भर हाथ-पांव के स्प्रिंग भी दुरुस्त हैं। मगर मेरा किसी काम में जी नहीं लगता सर ! और मैं नहीं जानता कि मुझे क्या हो गया है।"

रोबो व्याकुल होकर मेरी ओर देखने लगा। उसके हाथ-पांव कांप रहे थे; उसकी आंखों के कांच धुंधले पड़ गए थे, रात की हरी रोशनियां मद्धिम-सी हो गई थीं; और मुझे यों महसूस हो रहा था कि अगर कांच की आंखें कभी रो सकती हैं तो वे इस वक्त रो रही थीं और अगर लोहे की मशीन कभी इन्सानी भावनाओं के निकट आ सकती है तो वह पल यही था। और मैं भी कितना मूर्ख हूं ! जिस आंच ने लोहे को पिघला दिया, उसकी तरंग मेरे दिल के पास होकर गुजर गई और मैंने उसे पहचाना तक नहीं ! कैन्सर की गिल्टियों से गुजरती हुई एक अजनबी-सी खुशबू, सरकती हुई मेरे पास आई थी और मैंने अपने ज्ञान के गर्व में उसे सूंघा तक नहीं और उसे अपने कमरे से बाहर निकाल दिया।

"सर ! मुझे क्या हो गया है ?" रोबो ने व्यग्र होकर दु:खपूर्ण स्वर में कहा।

"तुम्हें प्रेम हो गया है रोबो।" मैंने उत्तर दिया।

"प्रेम क्या होता है सर ?" रोबो ने और भी व्याकुल होकर पूछा।

"प्रेम एक ऐसी खुशबू होती है रोबो···" मैंने कहा, "जिसकी जीवन की हर लेबोरेट्री में आवश्यकता महसूस होती है···मैं कल लिला को काम पर बुला लूंगा।"

कुदसिया पार्क का अहमद

रात को मैंने सपना देखा—एक बहुत बड़ी मूर्ति है…उसकी सूरत भी साफ नज़र नहीं आती, क्योंकि उसके अंग-अंग से ज्योति की किरणें फूट रही हैं…वह मूर्ति मेरे पास आ रही है, और पास आती है, और जब वह बिलकुल ही पास आ गई, तो उसकी ज्योति ने मेरी आंखों को चौंधिया दिया…मेरी आंखें अपने-आप बन्द हो गईं…फिर मुझे ऐसा लगा जैसे उस मूर्ति ने हाथ बढ़ाकर मेरे माथे को छू लिया और बड़ी मीठी आवाज़ में बोली :

"जा बेटा…हमने तेरी सुन ली…अब संसार को तेरे उपदेश की जरूरत है, नहीं तो यह संसार नष्ट हो जाएगा। इसलिए बेटा जा, घर से निकल और भगवान के पांच नेक बन्दे ढूंढ़ ले और उन-पर अपने ज्ञान का भेद खोल दे और उनकी सहायता से इस संसार को बदल दे।"

इसके बाद ही मेरी आंख खुल गई और मैंने अपने-आपको तीस-हज़ारी के एक अंधकारमय छप्पर में अपने झलंगे पर लेटा हुआ पाया। ताख में दिये की लौ झिलमिला रही थी और एक कोने में खटिया पर मुझे अपनी सत्तर बरस की बुड्ढी मां का मुरझाया हुआ कमज़ोर और पीला चेहरा एक सूखी हुई ममी के समान नज़र आया। मेरा सारा शरीर किसी अनजाने भय से कांप रहा था। मैं अपनी झलंगी चारपाई पर उठकर बैठ गया। बैठकर उठा, और पास के ढके

हुए घड़ौंरे से मुंह लगाकर गटागट पानी पिया। पानी पीने से जब मन कुछ शांत हुआ तो कागज-पेंसिल लेकर बैठ गया। कल सुबह ही मुझे परमेश्वर के पांच भक्तों की खोज में निकल जाना होगा। दिल्ली इतना बड़ा शहर है, इसमें परमेश्वर के पांच सदाचारी भक्तों को—केवल पांच सदाचारी भक्तों को—खोज निकालना कुछ कठिन न होगा। लेकिन मुझे क्या कहना होगा उनसे ? इस बात पर मुझे अभी से ध्यान कर लेना चाहिए, क्योंकि अब विचारने का समय बीत चुका है अब सिर्फ कर्म करने का समय है। मैं दिल्ली के एक छोटे-से प्रेस में साधारण-सा प्रूफरीडर हूं। दिन-भर संसार के बड़े-बड़े ज्ञानियों की पुस्तकों के प्रूफ ठीक करता हूं, लेकिन अब समय आ गया है कि उन बड़े-बड़े ज्ञानियों की पुस्तकों को ताक पर रखकर संसार की खुली पुस्तक के प्रूफ ठीक कराए जाएं। भगवान ने मुझे इस कार्य के लिए चुना है—यह मेरा सौभाग्य है।

मैं रात के शेष समय में अपनी वाणी पर विचार करता रहा। पांच-छः पन्ने काले किए, इतने में सुबह हो गई। मां ने उठकर रात की बची हुई दो रोटियां मेरे सामने रखीं और बासी दाल। मैंने एक रोटी दाल के साथ खा ली। दूसरी कागज में लपेट ली। फिर छप्पर की छत से बांस का एक डंडा निकाला और चाकू लेकर उसके एक सिरे को चीरने लगा।

"अरे, यह क्या करता है ?" मां ने पूछा।

"मैं संसार को बदलने जा रहा हूं", मैंने उसे बताया।

"पहले अपने कपड़े तो बदल ले।" मां ने मेरी मैली-कुचैली फटी हुई कमीज की ओर इशारा किया, फिर उसने बड़े प्यार से मेरे माथे पर हाथ रखा और एकदम चौंक गई। "अरे, तेरा माथा आग के समान गर्म है।" वह भयभीत होकर बोली।

"यह आग नहीं है, भगवान की ज्योति है," मैंने दोनों हाथ

चौंककर उसने कहा और मुझे गाय का दर्शन सुना दिया।

हमारा भजन सुनकर वह मेरे रास्ते में खड़ी हो गई। घबराकर बोली, “मैं भूखे हरगिज नहीं जाने दूंगी, आखिर हुआ है क्या ! चल हाथ-मुंह धो, कपड़े बदल और चौके में आ। ऊल-जूल मत बक।”

मैंने भाग का डंडा उठाया। मां घबराकर दूर हो गई, मैं छप्पर के दरवाजे से निकल गया।

सबसे पहले मैं पार्लियामेंट हाउस गया जहां सुना है कि भगवान के सभी सदाचारी भक्त रहते हैं। मगर वहां किसीने मेरी बात नहीं सुनी। किसीको समय नहीं था। मंत्री, उपमंत्री, चीफ सेक्रेटरी, सेक्रेटरी, राज्यसभा के मेम्बर, लोकसभा के मेम्बर सभी अपने-अपने कामों, और कामों से ज्यादा गुप्त मंत्रणा में लीन नजर आए। किसीने ध्यान देकर बातें सुनना तो दूर, मेरी ओर नजर उठाकर देखा तक नहीं। मीलों लम्बी फुटपाथ पर जब मैं चलते-चलते बेदम होने लगा और भूख और प्यास से निढाल होने लगा तो सुस्ताने के लिए एक खाली कमरे में घुस गया जो किसी बड़े आदमी का आफिस मालूम होता था। कमरे में मोटा गदेला बिछा हुआ था और पंखा चल रहा था और फोम-रबर की गद्देदार आरामकुर्सियां बिछी हुई थीं। मैंने चप्पल उतारकर एक कोने में रखीं—बांस के डंडे को दीवार से टिकाया और एक आरामकुर्सी पर लेटकर सुख और शांति की सांस लेने लगा। इतने में दरवाजे पर मुझे कदमों की चाप सुनाई दी और फिर बातचीत की आवाज। कोई किसीसे कह रहा था, “पटना से आपके चाचा का पत्र लाया हूं। वे बोले—तू सीधा दिल्ली में मेरे भतीजे के पास चला जा। वह तो परमेश्वर का सदाचारी भक्त है। आज तक मैंने उसे कहा हो और उसने मुझे टाला हो, ऐसा तो कभी हुआ ही नहीं। बस उसी वक्त वह खत लेकर

हवाई जहाज में बैठकर सीधा आपके पास चला आया हूं। अब मेरी इज्जत और इस्मत दोनों आपके हाथ में है।"

जवाब में दर्द-भरी आवाज आई, "अजी मैं किस लायक हूं। जो कुछ करता हूं, लोगों के भले के लिए करता हूं। बस यही मेरे जीवन का ध्येय है। आप कल आइए" मैं सबसे कह-सुन रखूंगा, आपका काम हो जाएगा।"

जवाब में फिर पहले आदमी की घिघियाई हुई आवाज सुनाई दी—शुक्रिया के चन्द बोल पढ़कर वह रुखसत हुआ और वह भगवान का सदाचारी भगत कमरे में आया तो मैं उसे देखकर बाग-बाग हुआ। सफेद खद्दर में सजे, सर पर गांधी टोपी, चेहरे पर सदाचार की शोभा—आते ही अपनी कुर्सी पर बैठकर किसी मंत्री को टेलीफोन करने लगा और जब टेलीफोन से फारिग हुआ तो अचानक उसकी नजर मुझपर पड़ी। देखते ही भौचक्का हो गया। फौरन अपनी कुर्सी से उठकर मेरे पास आया और बोला, "तुम कौन हो?"

मैंने उसके पास जाकर सरगोशी में कहा, "एक पैगाम लाया हूं आपके लिए।"

"किसका?"

"भगवान का।"

नाम सुनते ही उसके चेहरे की रौनक दोबाला हो गई। ज्योति उसकी आंखों से छलकने लगी, चेहरे की मुस्कराहट बढ़ गई। बड़ी मेहरबानी से मुझे मेरी कुर्सी पर वापस बिठाते हुए बोला, "अच्छा, अच्छा, मैं समझ गया; भगवानसिंह कैमिस्ट का संदेश लाए हो, वही जिसका कोटा मैंने बढ़वा दिया था।"

"जी नहीं, मैंने बड़ी मजबूती से अपने बांस के डण्डे को थामते हुए कहा, "भगवानसिंह कैमिस्ट की तरफ से नहीं आया हूं, मैं तो उसकी ओर से आया हूं जो सबका भगवान है।"

मेरी बात सुनकर उसके चेहरे की मुस्कराहट, आंखों का उल्लास, बातों की मिठास सब एकदम गायब हो गई। होंठों के कोने फड़कने लगे। उसने ज़ोर से हथेली मारकर तीन-चार बार घंटी बजाई। घंटी की आवाज़ सुनते ही दो चपरासी भागे-भागे अन्दर आए। उस ऑफिसर ने मेरी ओर इशारा करके बड़ी सख्ती से कहा, "इसे बाहर निकाल दो!"

एक चपरासी ने मेरी दाईं बगल में हाथ दिया, दूसरे ने बाईं में, तीसरे क्षण में मैं दफ्तर के बाहर फर्श पर पड़ा था।

दिन-भर कनाटप्लेस में घूमता रहा, सैकड़ों दुकानें, हजारों लोग, लाखों का लेन-देन। दिन-भर चेहरे पढ़ता रहा, कहीं वह ज्योति नज़र न आई जिसे भगवान की ज्योति का प्रतिबिम्ब ही कह सकता। हर कोई अपने स्वार्थ का दास, अपनी ही किसी तुच्छ-सी इच्छा की डोरी से बंधा एक पुतली के समान चल रहा था, दुकान में घुस रहा था, दुकान से बाहर आ रहा था। बंडल बना रहा था, बंडल ले रहा था, बटुआ खोल रहा था, तिजोरी में रख रहा था। कितनी ही नन्ही-नन्ही डोरियों से नाचती हुई पुतलियां थीं।

तीसरे पहर के लगभग जनपथ पर एक दुकानदार नज़र आया। वह एक साड़ी खरीदने वाली स्त्री से कह रहा था, "विश्वास न हो तो बाजार में भाव पूछ लीजिए, यह बाटक-प्रिंट की साड़ी है। इस क्वालिटी की साड़ी आपको कहीं पचपन रुपये से कम में न मिलेगी। मैं जो पैंतालीस रुपये में दे रहा हूं तो आपको अपना स्थायी ग्राहक बनाने के लिए; दस रुपये का नुकसान उठा रहा हूं, आपको खुश करने के लिए। बस, दो पैसे कमाना और ग्राहक की सेवा करना यही मेरा धर्म है।"

उस शरीफ दुकानदार ने दस रुपये का नुकसान उठाकर वह

साड़ी उस स्त्री को दे दी।

फिर मैंने देखा कि अगले आधे घंटे मे उसने इसी प्रकार पांच और सात रुपये का नुकसान उठाकर एक कमीज और दो शलवार के कपड़े दूसरे दो खरीदारों को बेच दिए। यह एक नौजवान व्यापारी था। माथे पर तिलक, कमर पर सफेद धोती, गरदन मे गीता का लाकिट और हाथ के अंगूठे पर 'ओ३म्' खुदा हुआ था। मैंने सोचा—इससे पहले कि कोई और ग्राहक आए और यह भगवान का नेक बन्दा और नुकसान उठाए, मैं इसे भगवान का संदेश दे दूं। बस, यही सोचकर मैं सीधा दुकान के अंदर चला गया। मुझे देखकर उस व्यापारी ने अपनी मुस्कराट को किसी हद तक भींच लिया···मुझे सर से पांव तक देखा, फिर बोला, "शर्ट का कपड़ा ?"

"नहीं।"

"पायजामे का लट्ठा ?"

"नहीं।"

"रेडी-मेड खाकी पतलून ?"

"नही," मैंने उसके पास जाकर कहा, "आपके लिए एक संदेश लाया हूं।"

"ओहो," जैसे वह सुनते ही मेरी बात समझ गया। उसका चेहरा एकदम रोशन हो गया, जैसे उसके अंग-अंग में भगवान की ज्योति समा गई हो। मुझे अपने पास बिठाते हुए बोला, "समझ गया, लाला कौडेशाह के घर से आप हो, लड़की का संदेश लेकर?"

"नही," मैंने उसे बताया, "मैं तो भगवान का संदेश लेकर आया हूं।"

"तो फिर···"

उसने भी मेरे साथ वही सुलूक किया जो उससे पहले दो चपरासियों ने किया था।

सारी नगरी छान मारी — नई दिल्ली, पुरानी दिल्ली, चांदनी चौक, जामा मस्जिद, कुतुब साहब की लाट, करोलबाग का बाजार, बिड़ला मंदिर — कहीं पर वह सूरत नजर न आई जो मुझे आग लगाती। हैरान होकर थका-हारा आखिर घर लौट आया और दाल-रोटी खाकर सो गया और सुबह उठकर फिर थाली में एक रोटी रात की बासी खाकर और दूसरी कागज में लपेटकर अपनी खोज में विदा हुआ। मां का चेहरा उदास था, मगर उसकी हिम्मत न पड़ती थी कि मुझसे कुछ कहे-सुने।

आज मैं बहुत जल्दी सुबह ही निकल गया। हाथ में बांस का डंडा और बगल में बासी रोटी दबाए नई कचहरियों में सर झुकाए गुजर गया। चलते-चलते कश्मीरी गेट के बाहर हरी त्रिकोण के पास पहुंचा, जिसे लोग कुदसिया पार्क कहते हैं, तो फाटक खुला देखकर उसके अन्दर चला गया।

अन्दर जाते ही मुझे एक बूढ़ा आदमी मिला। एक मलगजी कमीज और मलगजा तहमद पहने हुए, सर झुकाए, हाथ में आटे की एक छोटी-सी पोटली उठाए बाग की रविश से गुजरता जाता था और रविश के करीब घास के टुकड़े को ध्यान से देखता जाता था और जहां-जहां उसे चींटियों के सूराख मिलते वहां आटा डालता जाता था। मैंने उसे देखते ही पहचान लिया कि भगवान का नेक बंदा है। चींटियों को आटा डालता है। मैंने उसका दामन पकड़ लिया। "भगवान का दर्शन करोगे ?" मैंने उससे पूछा।

वह बोला—"कौन है इस दुनिया में जो भगवान के दर्शन करना नहीं चाहता !"

"तो सीधे मेरे पीछे-पीछे चले आओ।"

"कहां ?"

मैंने कुदसिया पार्क के बीचोबीच इम्पीरियल पाम से घिरे हुए

चौक की ओर इशारा करके कहा, "वहां आ जाओ, मैं तुम्हें भगवान का संदेश दूंगा।"

उसने कहा, "च्यूटियों को आटा डालकर आता हूं अभी।"

मैं प्रसन्नचित्त आगे बढ़ गया। चलिए भगवान का एक नेक बंदा तो मिला। एक झाड़ी के नीचे मुझे एक अधेड़ उमर का आदमी नजर आया जो आलती-पालती मारे, दम साधे, सांस चढ़ाए प्राणायाम कर रहा था। कुछ मिनटों के बाद जब उसने अपना प्राणायाम खत्म किया तो मैं उससे बोला, "ऐसा क्यों करते हो?"

वह बोला, "जब सांस ऊपर मस्तक में जाता है तो उसका जलवा नजर आता है।"

मैंने कहा, "प्राणायाम के बिना उसका जलवा देखना चाहते हो तो मेरे पीछे-पीछे चले आओ।"

"कहां?" उसने पूछा।

मैंने कुदसिया पार्क के बीच वाले चौक की ओर इशारा किया।

वह बोला, "प्राणायाम की दूसरी क्रिया खत्म कर लूं तो आता हूं।"

"उससे क्या होगा?" मैंने पूछा।

वह बोला, "उससे फेफड़े मजबूत होते हैं, बाग की खुली साफ हवा शरीर में जाती है।"

मैंने कहा, "दिन में साढ़े तेईस घंटे शहर की गंदी हवा खाने के बाद सिर्फ दस-पंद्रह मिनट स्वच्छ हवा खाने से फेफड़े कैसे मजबूत हो सकते हैं? हो सके तो सारे शहर की हवा को साफ करो।"

"खैर, तुम चलो, मैं आता हूं," वह प्राणायाम की दूसरी क्रिया में लीन हो गया।

आगे बढ़ा तो एक नौजवान नजर आया जो हाथ में एक चाकू लिए इम्पीरियल पाम के तनों को ध्यान से देख रहा था।

"चौक के बीच में, जहां बाग की सारी रविशें आकर मिलती हैं।"

वह बोला, "अच्छा, ज़रा ये दो नाम और काट दूं, तो आता हूं।"

चौक के बीच में पक्के चबूतरे पर एक नौजवान आदमी कमर तक धोती पहने और कमर से ऊपर केवल एक जनेऊ पहने, माथे पर चंदन का लम्बा तिलक लगाए उस ओर मुंह किए बैठा था जिधर से यमुनाजी से नहा-धोकर आने वाले यात्रियों का तांता लगा हुआ था, जो जमुनाजी स्नान करके कुदसिया पार्क की रविशों को काटते हुए मोरी गेट या सब्ज़ी मंडी की ओर चले जा रहे थे। ये लोग कुदसिया पार्क को एक शार्ट-कट के समान इस्तेमाल करते थे। वह नौजवान लम्बा-सूखा-सांवला चौकड़ी मारे बैठा था और मुंह ही मुंह में बुदबुदा रहा था, "भज मन राम हरे···भज मन राम हरे।"

मैं बहुत देर तक उसके पास खड़ा रहा, मगर जब बहुत देर तक उसने मेरी ओर कोई ध्यान न दिया तो चंद कदम आगे बढ़कर बिलकुल उसके सर पर खड़ा होकर कहने लगा, "बच्चा, भगवान के दर्शन करोगे?"

उस नौजवान ने अपनी आंखें खोलीं, मेरी ओर देखा, फिर अपनी आंखें बन्द कर लीं और बड़ी लापरवाही से बोला, "मेरे मन में अब कोई इच्छा नहीं रही। भगवान को देखने की इच्छा भी नहीं रही। अब मैं हर प्रकार की इच्छा से आज़ाद हो चुका हूं···भज मन राम हरे···भज मन राम हरे।"

वह धीरे-धीरे आंखें बन्द किए बुदबुदाने लगा और मैं चबूतरे के दूसरे कोने की ओर चला गया जहां दो बुड्ढे पेंशन पाने वाले बड़ी लगन से फ़िलासफ़ी पर बातचीत कर रहे थे। फलसफे के बीच-बीच में कुछ इस प्रकार की बातचीत भी हो जाती, "अजी, मैंने तो इस

व्यापार के लिए ही तय किया है। मगर कारोबार बेटों को सौंप दिया। लड़कियों की शादी कर दी है। भगवान की कृपा से मेरी इन्कमटैक्स की रिटर्नों को इस साल गवर्नमेंट ने साठ लाख की कमाई का तय किया है। दो फैक्टरियां और फरीदाबाद में चालू कर दी हैं। एक कोठी दिल्ली में है, एक देहरादून में, एक नई दिल्ली में। [illegible] पड़ी गया है। मगर अब दुनिया से दिल हटा लिया है। सुबह-सवेरे इधर कुदसिया पार्क चला आता हूं और भगवान की याद करता हूं।"

"मैं अपने उसूलों का बड़ा पक्का हूं भाई साहिब!" दूसरा बुड्ढा कह रहा था, "पहले मैं स्टेशन मास्टर था। मगर आज तक हराम का एक पैसा नहीं लिया। जब लिया किसी की सेवा करके लिया। मैं उस आदमी को बहुत बेईमान समझता हूं जो किसी का पैसा लेकर काम नहीं करता। इसलिए जहां रहा, सब व्यापारी मुझसे बड़े खुश रहे और गवर्नमेंट भी मुझसे खुश रही, क्योंकि मेरा कैरेक्टर आज तक बेदाग रहा है। भगवान की कसम ले लो जो आज तक अपनी बीवी के सिवा किसी दूसरी औरत को बुरी नजर से देखा हो। शादियां तो मैंने तीन करीं। मगर जब पहली बीवी मर गई तो दूसरी करी, दूसरी मर गई तो तीसरी करी। मगर कसम ले लो जो आज तक अपनी बीवी के सिवा किसी दूसरी को बुरी नजर से देखा हो। जब से तीसरी बीवी मरी है, गृहस्थ-जीवन बिलकुल तज दिया है और परमेश्वर से लौ लगा ली है।"

कल मैं कितना उदास था और आज मैं कितना खुश था। आज सुबह-सुबह भगवान के पांचों नेक बंदे एक ही स्थान पर इसी कुदसिया पार्क में मुझे मिल गए। एक ही घंटे में जैसे भगवान ने उन्हें मेरे ही लिए इकट्ठा कर दिया था।

मैंने उन पांचों नेक बंदों को चबूतरे के नीचे घास पर बैठने को कहा और खुद चबूतरे पर चढकर खड़ा हो गया। सबसे पहले मैंने अपने बांस के डंडे को खड़ा किया। उसके नुकीले सिरे की चिरी हुई खपच्चों में कल रात की बासी रोटी अटकाई और बांस के डंडे को एक झंडे के समान ऊंचा करता हुआ बोला :

"सज्जनो! तुम भगवान के दर्शन करना चाहते हो। मैं तुमसे कहता हूं, यही रोटी परम परमेश्वर है, यही अन्न भगवान है। रोटी बनाओ और अन्न उत्पन्न करो, और अन्न उत्पन्न करने के लिए मेहनत करो। काम करो, काम करो और काम मांगो। और जो राज काम न दे उससे कह दो कि जो राज्य सबको काम नहीं दे सकता वह सबपर शासन भी नहीं कर सकता। मैं कहता हूं····"

मगर आगे मेरी बात किसीने नहीं सुनी। वे लोग बड़े जोर से हंसने लगे। मगर जब मैं उनकी हंसी की परवाह किए बिना आगे बोलता ही चला गया तो वे लोग नाराज होने लगे। नाराज होकर चबूतरे पर कुछ पलों में उन पांचों ने मुझे घेर लिया और मेरे हाथ से बांस का डंडा छीनकर उसी बांस से मुझे पीट-पीटकर चबूतरे पर बिछा दिया।

कुदसिया पार्क में सन्नाटा था। प्राणायाम करने वाला फिर झाड़ी के नीचे प्राणायाम करने चला गया था। च्यूटियों को आटा डालने वाला फिर च्यूटियों को आटा डालने में लीन हो गया था। दोनों बुड्ढे फलसफे की भूलभुलैयों में गुम हो गए थे और वह नौजवान चाकू लेकर फिर से तनों पर लिखे मुसलमानों के नाम काटने में लग गया था। मैं चबूतरे पर घायल अवस्था में पड़ा था और दुनिया वापस अपने ढर्रे पर चली गई थी।

जमुनाजी से स्नान करके वापस आने वालों को पास कुदसिया

[illegible] में [illegible] हो रही है । [illegible] नौजवान, बुड्ढी औरतें [illegible] [illegible] और [illegible] में कुछ नीचे तक [illegible] हुई [illegible] सी हुई [illegible] रही थी ।

[illegible] नौजवान जिसके दिल में कोई [illegible] अभी तक [illegible] गुनगुना भी रहा था, "गज [illegible] [illegible]" अचानक उस नौजवान ने [illegible] और बुड्ढी औरतों को देखकर उसके दिल [illegible] और [illegible] मुंह बनाकर बुदबुदाने लगा, "[illegible] भी [illegible] है [illegible] हरे [illegible] कैसी [illegible] लगती है [illegible] राम [illegible]"

एक टुकड़ा मुहब्बत का

आज मनोहर की बार में कोई हंगामा न था। लम्बे काउंटर के करीब आधे दायरे की शक्ल में बिछे हुए बारह गद्देदार स्टूलों पर मनोहर के बारह करीबी दोस्त सर भुकाए खामोशी से शराब पी रहे थे जैसे वे शराब न पी रहे हों जुलाब की कोई दवा पी रहे हों, कुछ ऐसी तकलीफ उनके चेहरों पर तारी था। काउंटर से परे हाल की मेजों पर भी यह सन्नाटा छाया हुआ था। अंदर आते ही मैं कुछ क्षणों के लिए झिझका। खामोशी समझ में न आई, क्योंकि मनोहर की बार दिल्ली की सबसे भव्य बार समझी जाती थी। झगड़ा कभी न होता था, लेकिन हंगामा हर रोज होता था : यहां शहर के ज्ञानी आते थे। शायर और अदीब, फिलासफर और संगीतकार, पढ़े-लिखे बिजनेस मैन, और अच्छे लिबास पहनने वाले मंजे हुए सियासी और कहीं-कहीं कोई चुपके से होंठों में मुस्कराता हुआ सरकारी अफसर। अपनी अफसरी पर लज्जित और शर्मिन्दा! मनोहर के दोस्तों का दायरा बहुत बड़ा था, और मनोहर की बार में ज्यादातर मनोहर के दोस्त ही आते थे। शाम होते ही आ जाते थे। ग्यारह बजे तक महफिल जमी रहती। हंसी-मजाक, शेरो-शायरी, चुस्त जुमलेबाजी। कहीं-कहीं थोड़ा-सा फक्कड़पन भी। ग्यारह बजे मनोहर अपनी बार बंद कर देता; और फिर अपने कुछ बहुत करीबी दोस्तों को लेकर अपालो होटल की लॉन में चला

जाता। शाम को बारह बजे तक एक दौर फिर चलता, क्योंकि आमतौर से होटल वाले बारह बजे तक ड्रिंक देते थे। अगली होटल की लान में पीने का मजा ही कुछ और था। खुले लान में, खुले आसमान तले, इमली के पेड़ के नीचे मालूम होता था शराब नहीं पी रहे हैं चांदनी पी रहे हैं, तारों की निगाहें पी रहे हैं, रात के सन्नाटे में याद आने वाली हसीनों का तसव्वुर पी रहे हैं। अब हर शख्स अकेला है। अपनी-अपनी यादों में खोया हुआ। धीरे-धीरे, धीमे-धीमे कदमों से सरककर रात हर शख्स के करीब आ जाती है, और उससे लिपटकर मुहब्बत करने वाली औरत की तरह सिसकती है। अब जाम में शराब नहीं है। सिर्फ आंसू है। बारह बजे के करीब मनोहर इस सन्नाटे को तोड़ देता, और बुलन्द आवाज में कहता, 'चलो यारो, जी० बी० रोड चलें।'

जी० बी० रोड की गाने वालियां जैसे बारह बजे ही से मनोहर की टोली के इन्तजार में होती। चार-पांच मोटरों में लदकर पन्द्रह-बीस यार मनोहर की रहनुमाई में बारी-बारी से सब अच्छी गाने वालियों के दरवाजों का कुंडा खटखटाते। हर जगह आधा-पौना घंटा बैठकर गाना सुनते। तीन बजे के करीब जब मनोहर और उसके दोस्तों की जेबें खाली हो जातीं तो मनोहर को जम्हाई आने लगती।

'चलो यारो घर चलें और बिस्तर पर पड़ जाएं।'

अजीब दिलचस्प आवारगी, बेफिकरी और खुशगप्पियों के दिन थे। उन दिनों यारों को सिर्फ एक ही गम था—दिन क्यों चढ़ता है? रात क्यों इतनी जल्दी खत्म हो जाती है।

इसलिए आज मैं मनोहर की बार का सन्नाटा देखकर चौंक गया, काउण्टर पर खिलाफ-उसूल आज मनोहर भी गायब था। और चौकन्ना हुआ, आगे बढ़ा। एक डबल व्हिस्की की आवाज़ देकर

होलसेल घड़ियां बेचने वाले गंजे रतनलाल के सर पर हाथ मारकर बोला :

"क्यों बे गंजे, आज चुप-चुप क्यों है ?"

रतनलाल को एक मर्ज था। जब तक उसके गंजे सर पर दो-तीन करारे हाथ न पड़ें, उसे नशा ही न होता था। ज्यादा नशा लाने के लिए मनोहर ने अपने काउण्टर की दराज़ में प्लाईवुड की एक चपटी-सी तख्ती रख छोड़ी थी जिससे वह बांस की छड़ी की तरह रतनलाल के सर पर मारता था। सर पर मारते ही पटाखे की सी आवाज होती और वह अपनी गोल-गोल आंख घुमाते हुए खुश होकर चारों तरफ देखता और कहता :

'यार मनोहर, एक पट्टी और मार, नशा दूना हो जाए।'

मगर आज मेरे हाथ मारने से रतनलाल रत्ती-भर खुश नहीं हुआ, उलटा नाराज होकर मेरी तरफ यूं देखने लगा, जैसे मैंने उसे बेइज्जत करने के लिए उसके सर पर हाथ मारा हो।

मैं घबराकर जौहरी की तरफ मुड़ा, जौहरी फेशमैन होटल में विदेशी यात्रियों के हाथ हिन्दुस्तानी जेवरात आठ गुनी कीमत पर बेचता था। एक रण्डी उसकी मेरठ में थी, दूसरी जी० बी० रोड पर। एक बीवी घर पर थी। मगर शक्ल-सूरत से ऐसा शरमीला और कुंवारा लगता था, जैसे आज तक उसने किसी औरत की सूरत न देखी हो।

"जौहरी, आज यार को क्या हुआ है ?" मैंने उससे पूछा।

"जौहरी ने चौंककर चुपचाप मेरी तरफ देखा, फिर अपनी निगाहें फेरकर अपने जाम में डुबो दीं, कुछ नहीं बोला।

तो मैंने चेतराम का कंधा झिंझोड़ा, जो देश की फारेन एक्सचेंज की मुश्किल को दूर करने के लिए जाली डालर के नोट छापता था, "कुछ मुंह से फूटोगे कि नहीं ?"

[illegible] ने हाथ के झटके से अपने कंधे से मेरा हाथ अलग कर दिया और नाराज होकर बोला, "मनोहर को हार्ट-अटैक हुआ है।"

मैं सकते में आ गया। मनोहर को हार्ट-अटैक!

[illegible] जवान को हार्ट-अटैक!

वह आदमी जो हर समय हंसता-खेलता रहता था। जिसके अन्दर जिन्दगी की धड़कन एक शानदार बिजली के जेनरेटर की तरह दौड़ती रहती थी, जिसका दिल एक घोड़े की तरह मजबूत था, उसे हार्ट-अटैक कैसे हो सकता है? मेरा दिमाग घूमने लगा। मैंने जल्दी से [illegible] को अपने मुंह से लगाया और गिलास खाली कर दिया।

मनोहर चार दिन अस्पताल में आक्सीजन पर रहा। फिर होले-होले सम्हलने लगा। तीन महीने बाद इस योग्य हो गया कि अपने बिस्तर से उठकर कमरे में चार कदम चल सके। छः महीने बाद अपने पांवों पर आ गया। फिर वही बार के हंगामे, अपालो होटल की बैठक, सी० पी० रोड की महफिल, वही चहचहे, गुप-गप्पियां और ठोहकें। बार की बहार वापस आ गई, और कुछ ज्यादा तेजी के साथ, रंगीनियां बढ़ गईं, महफिलें लम्बी होती गईं, मनोहर के कहकहे ऊंचे होते गए। वह पहले से ज्यादा खिलंदरा और शरीर हो गया।

एक दिन उसके बड़े भाई गजेन्दर ने मुझे बुलाया और अकेले कमरे में ले जाके कहने लगा, "तुम मनोहर के बहुत करीब हो तुम उसे समझाओ, वह अपनी आवारगी छोड़ दे।"

"क्या करता है वह?" मैंने कहा, "गाना ही तो सुनता है।"

"नहीं, तुम नहीं जानते, डाक्टरों ने बड़ी सख्ती से मना किया है। वह सिगरेट न पिए, शराब न पिए, रात के दस बजे के बाद न

रते। मगर वह मेरी एक नहीं सुनता, पहले से ज्यादा काम में रहता है। अपनी सेहत का ज़रा भी ख्याल नहीं करता।"

मैंने कहा, "मुझे तो उसकी सेहत पहले से अच्छी दिखाई देती है। इस कदर चुस्त और चाक-चौबन्द दिखाई देता है कि एक बार उसे देखकर जी चाहता है कि मुझे भी एक ऐसा हार्ट-अटैक हो जाए।"

गजेन्दर ने मजबूती से मेरा हाथ पकड़ लिया, घुटी हुई आवाज में बोला, "तुम नहीं जानते, असल मामला क्या है।"

"क्या है?" मैंने पूछा।

गजेन्दर खामोशी से देर तक अपने कमरे में टहलता रहा, और अफसोस से हाथ मलता रहा, फिर मेरी तरफ मुड़कर बोला, "उसे एक लड़की से मुहब्बत है।"

"किसे? मनोहर को?" मैंने हैरत से पूछा।

"हां।"

"हा-हा-हा," मैं बेअख्तियार हंसने लगा। "मुहब्बत और मनोहर?" फिर हंसने लगा।

"मजाक मत करो, यह सच है। बिलकुल सच है।" गजेन्दर मेरे पास आके कहने लगा, "उसे एक लड़की से मुहब्बत है और जिस दिन उसे हार्ट-अटैक हुआ उसी दिन उस लड़की की शादी हुई थी।"

देर तक हम दोनों चुप एक-दूसरे को घूरते रहे, मैं आश्चर्य से और वह किसी आने वाली दुर्घटना के डर से। फिर उसने बड़ी बेबसी से अपने दोनों हाथ मले, और मुझसे कहा:

"वह अपने-आपको खत्म किए डालता है। उसे समझाओ किसी तरह, तुम उसके दोस्त हो।"

एक दिन मैंने मनोहर को, दिन में, उसकी कैबिन में पकड़ लिया।

"यह रजनी कौन है ?"

वह देर तक आँखें झपकाता रहा, फिर बोला, "तुम्हें गजेन्दर ने बताया होगा ?"

"हाँ।"

"भाई साहब, वह मामूली लड़की है। मैं किसी लड़की की मुहब्बत के चक्कर-वक्कर में नहीं पड़ा, आज तक।" वह जरा गुस्से से बोला।

"फिर तुम्हें उसी दिन हार्ट-अटैक क्यों हुआ, जिस दिन तुमने रजनी की शादी की खबर सुनी ?"

"बकवास करता है !" वह अपनी कुर्सी से उठकर बोला, और पीछे मुड़कर कमरे की अलमारी से जिन की एक बोतल और दो गिलास उठा लाया, 'एक-एक गैमलेट हो जाए।"

"नहीं।" मैंने बड़ी सख्ती से उसे मना किया, "तुम्हारे लिए शराब जहर है। तुम आज से शराब नहीं पियोगे।"

"अच्छा।" वह बड़ी नरमी से बोला।

"और सिगरेट भी नहीं पीओगे।"

"अच्छा।" वह शहद-भरे लहजे में बोला।

"और रात के दस बजे सो जाया करोगे।"

"अच्छा।"

"और जी० बी० रोड कभी नहीं जाओगे।"

"तो यूं क्यों नहीं कहता कि सीधा हरिद्वार चला जाऊं, साले !" उसने बड़े जोर से मेरे कंधे पर एक धप मारा, और गिलास मेरे हाथ में देकर बोला, "पी गैमलेट, और भूल जा मुहब्बत-वुहब्बत की बकवास !"

दो गैमलेट के बाद मैंने उससे पूछा, "क्या रजनी बहुत सुन्दर है ? खूबसूरत है ?"

वह बोला, "बस ऐसी ही खूबसूरत है जैसी अक्सर खूबसूरत लड़कियां होती हैं।"

"फिर क्या खास बात है उसमें ?"

"उसकी एक अदा मुझे बहुत पसन्द है।" वह बोला "कभी-कभी एड़ियां उठाकर जब वह इधर-उधर हैरान निगाहों से देखती हुई चलती है तो उस अदा से दुनिया की कोई खूबसूरत औरत नहीं चलती है। वह अदा मेरे दिल पर नक्श है।"

उसने अपने सीने पर हाथ रखा।

"बस, उस एक अदा पर मर मिटे ? उल्लू !"

वह चुप रहा, हौले-हौले मुस्कराता रहा। मेरी निगाहों से परे, जैसे किसीको हवा में एड़ियां उठाए चलता देख रहा हो।

"रजनी को कब से जानते हो ?"

"बचपन से।"

"फिर उससे शादी क्यों नहीं की ?"

"करना चाहता था, मगर उसके मां-बाप नहीं माने, बोले—तुम अरोड़े हो जात के, हम खत्री हैं जात के। इसलिए मेरी उसकी शादी नहीं हो सकी।"

"उठा लाते उसे—साले !" मैंने गुस्से से कहा, "तुम जो अपने दूसरे दोस्तों के लिए लड़कियां उठा लाते हो, अपने लिए नहीं ला सकते ?"

"आदमी जिससे शादी करना चाहता है उसे उठा नहीं सकता।" वह बहुत धीरे से बोला, और मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे मैंने हवा में सिसकी-सी सुनी।

मैं बहुत देर तक चुप रहा, फिर उससे पूछा, "उससे कभी बात की थी ?"

"मौका ही नहीं मिला।"

"मौका ही नहीं मिला !" मैंने हैरत से दोहराया।

वह बहुत खिसियाकर बोला, "मौके तो बहुत-से मिले, मगर कुछ मुझसे कहा ही नहीं गया।" वह एक घूंट का अहमक हलाते हुए बोला, "शादी से कुछ दिन पहले वह मेरी बार में आई थी।"

"इस बार में ? कहां ?"

"हां, मैं काउंटर पर दिन-भर की आमदनी गिन रहा था। काउंटर पर नोटों और सिक्कों का ढेर लगा हुआ था—चवन्नियां, अठन्नियां और पैसों का ढेर लगा हुआ था, कि मैंने उसे अचानक बिलकुल अपने करीब काउंटर पर खड़ा देखा। उसने केसरी रंग की चुस्त कमीज पहनी हुई थी और गुलाबी शलवार, और वह मुझसे कह रही थी, "मुझे दस रुपये का चेंज चाहिए।" और उस वक्त मेरे पास कोई न था।

"फिर तुमने क्या किया ?" मैं बोला।

"मैं उसकी तरफ देखता रहा।"

"गधे !"

" वह फिर बोली, 'मुझे दस रुपये का चेंज चाहिए।'

" मैं उसकी तरफ देखता रहा, मेरी जबान तालू से लग गई थी और मेरी टांगें कांपने लगी थी; और मैं कुछ बोल न सका, मुझसे कुछ कहा नहीं गया। मैंने कांपते हाथों से दोनो हाथों में चवन्नियां, अठन्नियां और रुपये के सिक्के भरे, और भरी हुई मुट्ठी उसके सामने खोल दी। उसने खामोशी से मेरे हाथों से दस रुपये का चेंज उठा लिया, और बार-बार उसकी अंगुलियां मेरे हाथों से छूती रहीं, जैसे वे अंगुलियां हौले-हौले मेरे दिल पर दस्तक दे रही हों।"

"फिर ?" मैंने पूछा।

"फिर वह बड़े इत्मीनान से उस रेजगारी को अपनी हथेली पर रखके गिनने लगी, और मैं एक गूंगे भिखारी की तरह उसके पास

हता रहा, जैसे यह कोई बहुत बड़ी रस्म थी। जो कुछ मेरे हाथ था मैंने उसे दे दिया था, और उसमें से जितना वह ले सकती थी उसने ले लिया था, और अब किसीको किसीसे कुछ कहना न था जैसे इतना ही मेरा और उसका सम्बन्ध था, इसलिए उसने खामोशी से चेंज गिन लिया, और उसे अपने बटुए में रखकर उसने एड़िया उठाकर चारों तरफ हैरत से देखा, जैसे दीवारों से कुछ पूछना चाहती हो, और जब उसे चारों तरफ खामोशी के सिवा कुछ न मिला तो वह चली गई।"

मैं देर तक अपने गैमलेट के नाज़ुक गिलास की डंडी को अपनी गुलियों में घुमाता रहा, समझ में नहीं आता था उससे क्या कहूं।

"तुम भी कहीं शादी कर लो।" मैंने उसे सलाह दी।

मगर दूसरे क्षण ही मुझे अपनी सलाह बुरी और बेकार मालूम ई; कुछ ऐसा लगा, जैसे मैं उनसे कह रहा हूं, तुम भी कहीं शादी र लो, यानी तुम भी रेज़गारी गिन लो, नया जूता खरीद डालो, शान घाट चले जाओ। मैं खुद बहुत शर्मिन्दा हुआ और खामोशी उठकर चला आया।

चार साल बाद मनोहर को फिर हार्ट-अटैक हुआ। मैं उन तों यूरोप में था। अब की हमला पहले से भी सख्त था। मगर हिर भी बेहद सख्तजान था। वह यह अटैक भी झेल गया, और रह महीने बाद जब मैं यूरोप के सफ़र से लौटा तो उसे बार सा ही अपने काउंटर पर खड़े पाया। पहली नज़र में वह मुझे का त्यों ठीक, चुस्त और चाक-चौबन्द मालूम हुआ। मगर । करीब जाकर देखने पर मालूम हुआ कि उसके चेहरे की द झुर्री हो चुकी है। और जब वह चलता है तो उसका दाहिना ज़रा मुश्किल से उठता है। पास जाकर वह एक ऐसे भारी-

आँख में नहीं कोई चमक भी। साफ़ मालूम हुआ जो जिन्दा तो है लेकिन जिन्दगी जिसकी मिट चुकी है।

मुझे उसकी हालत देखकर बहुत दुःख हुआ। मगर उस समय चुप रहा। रात को जब हम लोग अकेले बैठे तो मैंने पूछा, "अब की कौन थी, तुम्हारे हार्ट-अटैक वाली ?"

मैंने शोखी-भरा सवाल किया था। वह एकदम चौंक गया। मुझे संजीदा और गम्भीर देखकर वह भी भड़कने के बजाय संजीदा हो गया। और जब उसने अपना सर ज़रा-सा मोड़ा, तो मुझे उसकी कनपटियों में चाँदी की तरह चमकते हुए कुछ सफ़ेद बाल नज़र आए।

"एक रंडी थी, जी० बी० रोड वाली।" वह मुस्कराने लगा।

"रंडी ?" मैंने आश्चर्य से चीखकर पूछा।

"हाँ-हाँ, रंडी," वह भी मेरे सवाल के लहजे से झल्लाकर बोला, "तो क्या मुहब्बत किसी की जन्मपत्री देखकर की जाती है ? या नस्ल-ए-नसब ?"

"नहीं-नहीं, मगर···" मैं ज़रा नरम पड़ने लगा।

"मगर क्या ?" वह झल्लाकर बोला।

"कुछ नहीं, तुम आगे कहो।"

"आगे कहने को कुछ भी तो नहीं है।" वह बोला।

"अरे !···तो तुम यहां भी गूंगे रहे ?"

"नहीं···मैंने तो कहा···और बार-बार कहा, मगर वह नहीं मानी।"

"वह रंडी नहीं मानी ?" मेरे मुंह से फिर हैरत की चीख-सी निकली।

"तुम बार-बार रंडी किसे कहते हो ?" वह गुस्से में तेज़ आवाज़ में बोलने लगा, "आल राइट, मैं जो··· में बेचता हूं, यह

रंडीपना नहीं है क्या ? तुम जो इंपोर्ट-एक्सपोर्ट के धंधे मे अण्डर-इन्वाइसिस करते हो, यह हरामीपना नहीं है क्या ? यह होटल वाला जो गवर्नमेंट से पैंतालीस लाख लेकर पैंतीस लाख मे होटल बनाता है, वह क्या रंडीपने में शामिल न होगा ? वह नेता जो इलेक्शन के मौके पर लम्बे-चौड़े वायदे करके मुकर जाता है, किस रंडी से बेहतर है, मिस्टर ! यहा कौन है, जिसकी रूह रंडी नहीं है ?"

"अरे, रे-रे, तुम तो नाराज हो गए ! मुझे माफ कर दो प्यारे, यूहीं मेरे मुंह से निकल गया था।"

मैंने इधर-उधर की बातें करके उसे ठंडा किया। जब उसका गुस्सा उतरा तो मैंने उससे पूछा, "मगर वह मानी क्यों नहीं ?"

"बड़ी अहमक थी, हर बार यही कहती थी—मैं तुम्हारे लायक नहीं हूं। मैं गन्दी हू। मैं तुमसे शादी नहीं कर सकती।"

"तो क्या तुम उससे शादी करना चाहते थे ?" मुझे फिर गुस्सा आने लगा। वास्तव मे किसीने कहा है कि लम्बे आदमी बड़े अहमक होते हैं, तो यह बिलकुल सच है, मैंने अपने दिल में सोचा।

"जी हा—मैं मनोहरदास वल्द श्यामदास, साकिन कश्मीरी गेट, दिल्ली उससे शादी करना चाहता था, मगर वह नहीं मानी। मगर मैं बराबर इसरार करता रहा, तो वह जी० बी० रोड छोड़कर लखनऊ चली गई। जब मैंने लखनऊ तक उसका पीछा किया तो, वह लखनऊ छोड़कर अपनी जन्मभूमि फिरोज़ाबाद चली गई। मैं फिरोज़ाबाद गया और उसके घर सात दिन रहा, और सात दि- उसकी खुशामद करता रहा, मगर वह नहीं मानी।"

"आखिर क्यों नहीं मानी ?"

"कहने लगी—मैं तुमसे कोई शादी नहीं करूंगी, क्योंकि मुझे तुमसे मुहब्बत है।"

"अजीब दलील है !"

...नंदमठ	
...नी	"
...रवृक्ष	"
...दिरा	"
...लकुण्डला	"
...बहनें :	रवीन्द्रनाथ ठाकुर
...ाई की शाम	
...पनी	"
...पुलीवाला	"
	"

मिलन :	रवीन्द्रनाथ ठाकुर
चार अध्याय	"
उजड़ा घर	"
नीरजा	"
देवदास :	शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय
चरित्रहीन	"
दत्ता	"
शेष प्रश्न	"
विराज बहू	"
गृहदाह	"
मझली दीदी : बड़ी दीदी	"
श्रीकांत	"
चन्द्रनाथ	"
परिणीता	"
शुभदा	"
पथ के दावेदार	"
ब्राह्मण की बेटी	"
विप्रदास	"
लेन-देन	"
ज़मीन आस्मान :	पर्ल बक
प्रेम या वासना :	टॉल्सटॉय
मैली चांदनी :	गुलशन नन्दा

...अपना सर मेज पर रखे हुए रेजगारी के ढेर में छिपा ... रोने लगा। यकायक रात बहुत गहरी और ...के कंधों पर उतर आई। आसपास की धुंधली ... फरिश्ते एड़िया उठा-उठाकर उसकी तरफ

हमारे कुछ उत्कृष्ट प्रकाशन

[illegible] :	[illegible]	अवनिका :	जयन्त वाचस्प
[illegible]	,,	हमी मनुष्य :	नरेश मेह
[illegible]	,,	खोए हुए मुसाफिर :	कमलेश्व
[illegible]	,,	तीसरा आदमी	
[illegible]	,,	सोया हुआ नगना :	राजेन्द्र अव
[illegible] :	आचार्य चतुरसेन	आई की भूख :	रजनी पनि

"नहीं मिली !"

"नहीं, मालूम हुआ वह फिरोजाबाद से मेरे जाने के दो महीने बाद ही चली गई थी। और अब मेरठ में धंधा करती है। तो मैं मेरठ गया। मुझे देखते ही उसने गाना-बजाना बन्द कर दिया; और मेरे पैरों पर सर रखकर रोने लगी। मैंने पूछा—जमुना, यह तूने क्या किया ? तो बोली—क्या करती ? झूठ बोलने के सिवा और कोई रास्ता न था। मैं तेरी जिन्दगी खराब न करना चाहती थी, इसलिए यहां आ गई। अब तो मेरे पेट में किसी दूसरे का बच्चा है। अब तो मैंने अपने-आपको इस कदर गलीज और गन्दा कर लिया

[illegible]	,,		
पापी	रांगेय राघव	डाक्टर देव :	अमृता प्रीत
तेलुगु की श्रेष्ठ कहानियां :	अनु० बालशौरि रेड्डी	नीना	,,
स्वप्नमयी :	विष्णु प्रभाकर	अश्रु	,,
पत्थर की नाव :	मन्मथनाथ गुप्त	बन्द दरवाजा	,,
अमिता :	हंसराज 'रहबर'	हीरे की कनी	,,
फागुन के दिन चार :	'उग्र'	रंग का पत्ता	,,
बुधुआ की बेटी	,,	एक सवाल	,,
त्यागपत्र :		नागमणि	,,

एक गधे की वापसी : कृश्न चन्दर
ग़द्दार ”
प्यास ”
एक गधे की आत्मकथा ”
उल्टी फुलझड़ियां ”
दर्दों का क़ैदी ”
कुली : मुल्कराज आनन्द
एक चादर मैली सी :
राजेन्द्रसिंह बेदी
वरमाला : शैलेश मटियानी
कुबरा ”
दुर्गेशनन्दिनी :
बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय
आनन्दमठ ”
रानी ”
सीताराम ”
देवी चौधरानी ”
कपालकुण्डला ”
दो बहनें : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
गुलाई की शान ”
नूरानी ”
काबुलीवाला ”
नौका डूबी ”
आंख की किरकिरी ”
योगिनी ”
घर और बाहर ”
मिलन : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
चार अध्याय ”
उजड़ा घर ”
नीरजा ”
देवदास : शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय
चरित्रहीन ”
दत्ता ”
शेष प्रश्न ”
बिराज बहू ”
गृहदाह ”
मंझली दीदी : बड़ी दीदी ”
श्रीकांत ”
चन्द्रनाथ ”
परिणीता ”
कुमुदा ”
पथ के दावेदार ”
ब्राह्मण की बेटी ”
विप्रदास ”
लेन-देन ”
जमीन आस्मान : पर्ल बक
प्रेम या वासना : टॉल्सटॉय
मैली चांदनी : गुलशन नन्दा
मौत की छाया : कॉनन डायल
जुआरी : दॉस्तावस्की
एक मछुआ : एक मोती
जॉन स्टेनबेक

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य एक रुपया

- [illegible]

- देश विदेश के प्रसिद्ध लेखकों की पुस्तकें—उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक, उर्दू शायरी, [illegible], [illegible], [illegible] आदि हिन्द पॉकेट बुक्स में प्रकाशित किया जाता है। हिन्द पुस्तकें [illegible] आकर्षक गेटअप, सुन्दर छपाई, [illegible] से प्रसिद्ध हैं। प्रत्येक पुस्तक का मूल्य केवल एक रुपया है। केवल कुछ पुस्तकों का मूल्य दो रुपये प्रति है, परन्तु उनकी पृष्ठ-संख्या २५० लगभग है।

- यदि आपको हिन्द पॉकेट बुक्स प्राप्त करने में किसी प्रकार की कठिनाई हो तो हमें लिखें। पुस्तकें एकसाथ मंगाने पर डाक-व्यय की सुविधा भी दी जाती है। यदि आप चाहते हैं कि आपको हिन्द पॉकेट बुक्स की सूचना निरन्तर मिलती रहे, तो अपना नाम, व्यवसाय और पूरा पता कार्ड पर लिखकर हमें भेज दें। हम आपको नये प्रकाशनों की सूचना देते रहेंगे।

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
जी० टी० रोड, शाहदरा, दि[illegible]

• [illegible]

• [illegible]

[illegible] है। हिन्द पुस्तकें [illegible]
[illegible] है। प्रत्येक पु[illegible]
[illegible] सकता है। केवल कुछ पुस्त[illegible]
दी जाती है, परन्तु उनकी पृष्ठ[illegible]
बराबर है।

• यदि आपको हिन्द पॉकेट बुक्स प्राप्त क[illegible]
किसी प्रकार की कठिनाई हो तो हमें लि[illegible]
पुस्तकें एकसाथ मंगाने पर डाक-व्यय दे[illegible]
सुविधा भी दी जाती है। यदि आप चाहते[illegible]
आपको हिन्द पॉकेट बुक्स की सूचना मिल[illegible]
मिलती रहे, तो अपना नाम, व्यवसाय और पू[illegible]
पता कार्ड पर लिखकर हमें भेज दें। हम आपको
नई प्रकाशनों की सूचना देते रहेंगे।

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
जी० टी० रोड, शाहदरा, दि[illegible]